शिव करें शिव सब का रे, बुरा किसी को नहीं कहें!

पावन गंगा उसको करे, जो पावनता चाहे।
अपावन जग को जो कहे, पावन हो नहीं पाये।।१।।

अपावन हम हैं जान लो, दूजा अपावन नहीं कहो।
चाकर गर रे बनना है, तो गंगा से तुम बात करो।।२।।

गर समझो गंगा नहाई करी, मैं रे श्रेष्ठ हो जाऊँगी।
तो जानो कछु नहीं मिले, नाहक समय गँवाऊँगी।।३।।

गर शिव रूप रे धरना है, नाग पे शय्या उनकी हो।
भव सागर में वह रे बसें, विषमय जीवन उनकी हो।।४।।

नाग लिपटें वा कंठ से, वह निरंतर मौन रहें।
शिव करें शिव सब का रे, बुरा किसी को नहीं कहें।।५।।

गंगा तट पे जायें लोग, मल धोना वह चाहते हैं।
जग में जो रे दुःख दिये, निजात उनसे चाहते हैं।।६।।

वा फल उन्हें नहीं मिलें, वह बीज मिटाना चाहते हैं।
ख़ुद बदलें पुनि नहीं करें, अस भाव नहीं वह लाते हैं।।७।।

जग को बुरा कही करके, वह गंगा तट पे जाते हैं।
ख़ुद को श्रेष्ठ वह मान करी, आसन वहाँ लगाते हैं।।८।।

उसे गंगे माँ से कुछ न मिले, जो इतना इतराते हैं।
गंगा उसको सब कुछ दे, जो प्यार करना चाहते हैं।।९।।

सोच ले क्या तू माँगे अब, क्या तेरी रे चाहना है।
तुझे अपना आप देना है, या यह जग ठुकराना है।।१०।।

गर तन देना है धरती को, तब गंगे माँ से रे कहो।
गर मन देना हो इस जग को, तब माँ को तुम पुकार लो।।११।।

बुद्धि गुमान रे त्याग की गर, चाहना है तो उसे कहो।
गर अपना आप रे देना है, जा के गंगा को दे दो।।१२।।

तुम जीते जी यह तन दे दो, मर के दिया तो क्या रे दिया।
जिसने जीते जी रे दिया, गंगा का रुख़ ही बदल गया।।१३।।

'गंगा श्रद्धा प्राणप्रद' में से

अनुक्रमणिका

३ **जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम्।**
सुश्री छोटे माँ

७ **मैं सीखना चाहता हूँ,**
क्योंकि मैं जानता नहीं...
श्रीमती पम्मी महता

१२ **मंनै मारगि ठाक न पाइ...**
अर्पणा प्रकाशन 'जपु जी साहिब' में से

१५ **नित्य निर्विकार होने का**
प्रयत्न ब्रह्मचर्य है!
अर्पणा प्रकाशन 'श्रीमद्भगवद्गीता' में से

२० **वैदिक विवाह**
अर्पणा प्रकाशन 'वैदिक विवाह' में से

२८ **राम पुकारे राम मिले,**
पुकार में सत्यता चाहिये!
पिताजी के साथ पूज्य माँ के अलौकिक संवाद

३२ **'मैं' के मिटे 'मैं' न रहे,**
बाक़ी राम रह जायेंगे...
'होली' का सत्संग

३७ **अर्पणा समाचार पत्र**

निर्वाण

- निर्वाण जीवन मुक्त की स्थिति है।

- जब तनत्व भाव का नितान्त अभाव हो जाये, तब जानो उस जीव ने निर्वाण पद पा लिया।

- जब आत्मवान् हो जाते हैं, तो वह नित्य निर्वाण पद में स्थित होते हैं।

- तन के रहते हुए जब 'मैं' तन से तद्रूपता त्याग कर आत्मा में विलीन हो जाती है, तब उसे निर्वाण पद में स्थित कहते हैं।

- मोक्ष को निर्वाण कहते हैं।

- अनात्मा का त्याग तथा आत्मा में एकरूपता निर्वाण पद का चिन्ह है।

- 'मैं' का लुप्त हो जाना ही निर्वाण है।

\- परम पूज्य माँ

❖ ❖ ❖

सम्पादक : *पूनम मलिक*
सह सम्पादक : *श्रीमती साधना पाल*

पता : अर्पणा आश्रम, मधुबन, करनाल
१३२ ०३७, हरियाणा, भारत

सम्पादक की ओर से

गद्य में प्रस्तुत सभी लेख साधकों के प्रश्नों के उत्तर में परम पूज्य माँ द्वारा प्राप्त सत्संगों पर आधारित हैं और संकलन-कर्ता की निजी समझ के अनुकूल हैं। काव्य की पंक्तियाँ पूज्य माँ के मुखारविंद से प्रवाहित दिव्य प्रवाह का अंश हैं; जिसे सुश्री छोटे माँ ने लेखनी बद्ध किया है। अपनी पूर्ण सामर्थ्य के अनुसार उसे ज्यों का त्यों प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुति में किसी भूल के लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं।

श्री हरीश्वर दयाल, अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन, करनाल १३२ ०३७ १०, हरियाणा द्वारा ९ मार्च २०१४ को प्रकाशित तथा सोना प्रिन्टर प्राईवेट लिमिटेड, एफ-८६/१, ओखला इण्डस्ट्रियल एरिया फेज़-I, नई दिल्ली ११० ०२० द्वारा मुद्रित

...जन्म मृत्यु जरा व्याधि दुःखदोषानुदर्शनम्।

सुश्री छोटे माँ

परम पूज्य माँ के साथ सुश्री छोटे माँ एवं अर्पणा परिवार

गीता में भगवान ने कहा है -

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च।
जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ।।

श्रीमद्भगवद्गीता - १३/८

अर्थात् *- इन्द्रियों के विषयों के प्रति वैराग्य भाव, और अहंकार का भी अभाव।*

जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा, व्याधि इत्यादि में दुःख रूप दोषों को पुनः पुनः देखना।

एक बार मैंने पूज्य माँ से पूछा कि इस भाव को किस प्रकार से तत्व रूप में ग्रहण किया जाये?

परम पूज्य माँ ने समझाया कि कुछ समय पहले यह तन जो हमारे साथ हँसता खेलता जीवन व्यतीत कर रहा था, अब हमारे समक्ष निर्जीव पड़ा हुआ है। आज यह तन निष्प्राण होकर भूमि पर पड़ा है। इस सत्यता का दर्शन ही सर्वोत्तम ज्ञान का दर्शन है।

आज मृतक तन को देखकर अनुभव सहित पता चल रहा है कि जिस तन को जीवन भर अपना मानते रहे आज प्राणों के जाने से उसकी कोई क़ीमत नहीं रही। माटी का तन माटी में मिल गया। इसी तन पर हम ऐंठते हैं, अपने को सर्वश्रेष्ठ समझते हैं। आज प्राणों के जाते ही तन अर्थहीन हो गया।

अब कौन इसका अपना या पराया है? किसे अपनाये और किससे गिला करे? यही सत्य दर्शन है। जो इस रहस्य को ग्रहण कर लेता है वह हर परिस्थिति में शान्त रहेगा, दुःखी नहीं होगा। उसमें गिले का भाव नहीं रहेगा। गिले-शिकवे तो संग के कारण उठते हैं। जब इस भाव में हम जागने लगते हैं तो शनैः-शनैः उत्तरायण की ओर बढ़ने लगते हैं। जीवत्व भाव में हमें ऐसा प्रतीत होता है कि 'यह मेरा तन है, मैं इसके लिये ही सब कुछ करूँ'। यही भाव कामना बन जाता है। इस संग के कारण मन दुःखी-सुखी होने लगता है और इसी भाव के जाल में फँसने लगता है।

इतना कुछ प्राप्त करके भी, हमें दुःख का भाव नहीं छोड़ता। जीव जब आंतरिक खोज करता है तो सहज ही उसे कृतज्ञता का प्रसाद मिलने लगता है। गर इसी भाव में जीव शुक्रिया करते हुये जीवन की बाक़ी घड़ियाँ द्रष्टा भाव में व्यतीत करे तो कामना की स्मृति के दुःख से निवृत्त होने लगता है।

जब जीव कृतज्ञ होने लगता है तब आन्तर में सहज में ऐसा भाव बहने लगता है -

"मैं जानूँ न जानूँ तुझको प्रभु, तेरी कृपा को देख के हार गई।
मैंने तो कुछ भी किया नहीं, तेरी कृपा प्रभु अनायास हुई।।...

...कभी सोचूँ तन कर्मन् कारण, कुछ मान क्या मैंने पाया है।
तो सुन ले मना तुझे आज कहें, तूने मिथ्या को ही अपनाया है।।..."

(अर्पणा प्रार्थना शास्त्र २/३९५ - २९.७.१९६०)

तब उसे मृत्यु का भय नहीं होता व कृतज्ञता का भाव सहज ही बह जाता है।

यही प्रसाद बन जाता है।

कृतज्ञता के अभाव में तो मन भड़केगा। संग के कारण जीव दुःखी-सुखी होगा। जीवन में आंतरिक खोज करने से ही जीव को पता लगेगा - 'मैंने जीवन में क्या पाया है और क्या खोया है? संग के कारण कितने श्वास अहंकार में व्यतीत किये, कितना भाव दम्भपूर्ण रहा? जीवन में कैसा आचरण रहा?'

- क्या जीवन में हर परिस्थिति में अपने दर्शन करके भगवान को धन्यवाद किया?

- कितना समय नफ़रत एवं गिले-शिकवे में व्यतीत किया?

- क्या कभी प्रेम से भगवान के आगे सीस झुकाया?

- क्या जग को राम रूप मान कर भगवान का प्रसाद माना?

- केवल लोगों को तोलते हुये, जीवन में अपने को ही श्रेष्ठ मानते रहे!

इसी कारण भगवान ने कहा -

...जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम्।

गीता के इस श्लोक के तत्व को जानते हुए उच्च कोटि का साधक भली प्रकार जान लेता है कि यह शरीर जिसे हम 'मैं' 'मैं' कह कर अपना मान रहे हैं, यह नश्वर है। यह वस्त्र तो फट जाते हैं। इस ज्ञान को गर जीते जी धारण कर लें, तो ही हम उत्तरायण की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

मृत्यु के आने से पहले ही हम मान जायें, तो जीवन में हमें आँख खोल कर जीना आ जायेगा। यहाँ पर भगवान अपने प्रिय सखा को यही समझा रहे हैं कि, 'इस विषय में शोक करना और तन से संग करना नहीं बनता, क्योंकि मृत्यु तो निश्चित आयेगी और मरने वाले का जन्म निश्चित होगा। यह सिद्ध हो चुका है। इस प्रकार इस ज्ञान को जान कर, समझने की कोशिश कर!'

गंगा जी के तट पर परम पूज्य माँ के साथ सुश्री छोटे माँ एवं अन्य अर्पणा सदस्य

भगवान ने कहा, 'अर्जुन! क्या तुम इसे मानते हो कि जो आया है उसे जाना ही है! जीवन का आना-जाना तो इस तन के साथ लगा हुआ है।'

यह मान कर ही हम सत् की ओर जा सकते हैं। यह जानने के लिये ही भगवान ने कहा -

... जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम्।

तो क्यों न कहें कि आज भगवान कहते हैं कि मुझ पर ध्यान लगाओ और देखो कि यह शव क्या कह रहा है - 'कुछ काल पहले मेरा भी तन था। इस हाड़-मांस के तन से प्राण जाते ही माटी का शरीर रह गया।'

प्राण के जाते ही जो शरीर का हश्र होता है उसकी समझ आ जायेगी। जो पल व्यतीत हो रहा है वह निकलता जा रहा है। इस रहस्य को हम समझ नहीं रहे, व दुःखी-सुखी हो रहे हैं। दर्शन तो होते हैं पर हम इस सत्यता को जान नहीं पाते। जो पल बीता जा रहा है वह फिर नहीं आयेगा, इसका राज़ भी हम समझ नहीं रहे। हम दुःखी-सुखी होते हैं, दर्शन भी होते हैं पर हम इस सत्यता को जाने नहीं, माने नहीं!

अब शरीर कहता है कि, 'आज मेरा बैर कहाँ और मेरी मैत्री कहाँ? आज मेरा सुख कहाँ और मेरा दुःख कहाँ?' मान का भाव प्राप्त करते रहे। इस मान के कारण कौन सी बुराई नहीं करी। शरीर बिन कहे कहता है, हे मूर्खता में रहने वाले जीव! मुझे देख तो ले! आज से मुझे जान तो ले! जीवन महा सुखी, और महा आनन्दमय हो जायेगा। जीवन में इसका तत्व और सत्त्व समझ आ जायेगा। इस शरीर की बेवफ़ाई हमें समझ आ जायेगी क्योंकि कभी बीमारी आ जायेगी, कभी बुढ़ापा आ जायेगा। न बुढ़ापा हाथ में है, न बीमारी हाथ में है, न जन्म हाथ में, न मृत्यु हाथ में है।

जीव उम्र बिता देता है पर इस ओर ध्यान नहीं देता। जिन्होंने इस पर ध्यान किया, उन्होंने इस पर चिन्तन करने को कहा कि हमारे हाथ में कुछ नहीं है। उन्होंने उन बीजों का ध्यान दिलाया जो पूर्व जन्मों से चले आ रहे हैं। मृत्यु का पल तो निश्चित है, सब जानते हैं।

हम शरीर से संग के कारण ही भला बुरा कहते हैं। शरीर के कारण ही ऊँच-नीच का भाव उत्पन्न होता है। हम मोह करते हैं और इस कारण इस तन से लिपटते हैं। इन्द्रियाँ तथा इस अर्थी से मोह हो गया है हमें! इतना बड़ा बनना क्यों चाहते हैं? मान-अपमान किसका? इस शरीर को Superior दिखाना चाहते हैं। दम्भ किसका करते हैं?

आज समझ लें - यह शरीर जिसे हम अपना घर कहते थे, वह हमारा साथ नहीं निभायेगा। आज यह भी भूल गये कि हम कौन थे। मन भूल गया कि यह तन तो माटी का बुत था। यही जीवन का हश्र है। जब जागृति होगी कि 'राम नाम सत्य है,' तब ही हमारा जीवन आरम्भ होगा। तभी जीवन विधि समझ आयेगी। तभी हम अपना तात्विक अस्तित्व समझ पायेंगे और उसमें समा पायेंगे।❖

मैं सीखना चाहता हूँ...

क्योंकि मैं जानता नहीं!

श्रीमती पम्मी महता

परम पूज्य माँ मन्दिर में

आप श्री हरि माँ प्रभु जी ने हमें कहा, 'अपने से श्रेष्ठ मानने वाले से ही आप सीख सकते हैं। पिता से बच्चे इसलिये नहीं सीख पाते, क्योंकि वे पिता के पिता बनने की कोशिश करते हैं! जबकि पिता facts में हैं और अनुभवी भी! जब तलक उन्हें अपने से श्रेष्ठ नहीं मानेंगे, आप सीख नहीं सकेंगे। इसी तरह सिखाने वाले को आप अपने से श्रेष्ठ नहीं मानेंगे व सीखने की आर्त पुकार नहीं होगी कि 'मैं सीखना चाहता हूँ, क्योंकि मैं जानता नहीं... तब तक सीख पाना नामुमकिन है!'

इसलिए हम अपने तन को अपना न मानें, क्योंकि उसकी कहानी तो रेखा से चल रही है। अपनी इसी भूल को हमने स्वयं realise करना है।

आपने आगे कहा, 'जब तलक तन को अपनाते हैं, तभी कहते हैं - 'मेरा है'। मगर

ध्यान से देखें - 'क्या यह मेरी मानता है? नहीं न!' यह सुनता इसलिए नहीं क्योंकि इसे रेखा का बहाव लिए जा रहा है।'

गर हम सच ही साधक हैं तो धन्यवाद करते हुये इस सत्यता को स्वीकार लेंगे।

यह तो आप श्री हरि माँ की असीम कृपा है जो हमें जीवन की सत्यता से अवगत करवा रहे हैं। वास्तव में हमें अवसर दे रहे हैं सीखने का...

इसलिये तो आप ने कहा, 'परिस्थितियाँ तो सिखाने आती हैं। इसलिए इन्हें ज्यों का त्यों देखते हुये moment to moment जी! तभी तो अपने सत्य को ग्रहण कर पाओगे, जीवन की सत्यता को जाने बिन, ग्रहण नहीं कर पाओगे।'

हमें तन कर्मफल भोगने को मिला है। आप श्री हरि माँ ने कहा, 'जैसे ही आँख खुलेगी, अपना सत्य नज़र आने लगेगा।' हमने ही तन, मन, बुद्धि को अपनाने की भूल की हुई है। हमने स्वयं को ही कर्त्ता मान लिया, यही भूल है। हमारे इस तन को अपनाने व संग करने की वजह से ही हमारी इन्द्रियाँ हमें तंग करती हैं।

आप माँ कहते हैं, 'facts में जी! जब आप अपनी सत्यता को मानते जाओगे तभी जीवन का दृष्टिकोण बदलता चला जायेगा। दुःख-सुख आपको घेरेंगे नहीं क्योंकि आप जान लोगे कि अपने दुःख-सुख का कारण हम स्वयं है। तभी आप अपने से उपराम होना सीख जाओगे।'

सच माँ, आप जैसे अनुभवी सद्‌गुरु ही हमें सिखा सकते हैं। आप ही की करुण कृपा ने हमें यह अवसर प्रदान किया है... जिज्ञासा तभी उठेगी, जब हम यह मान जायेंगे कि सच ही हम कुछ नहीं जानते। फिर भूल से भी नहीं कहेंगे, 'I know better!'

तभी तो, आप माँ ने कहा, 'मैं हँसते खेलते आप सभी को आगे से आगे ले जाऊँगा।' ठीक कहा माँ आपने! आप स्वयं देने वाले भी हैं, और साक्षी भी हैं! आप माँ को कोटि-कोटि प्रणाम देते हुये आपका धन्यवाद भी करते हैं।

आपने कहा, 'जीवन की हक़ीक़त से आपका परिचय भी कराता जाऊँगा। आप केवल इसे अपने जीवन में ग्रहण करते जाओ।'

माँ, आपके अनुभवी जीवन में छिपे ज्ञान विज्ञान दोनों हैं। गर हम अपने को ही श्रेष्ठ मानते गये तो जान लें, कुछ भी ग्रहण नहीं कर पायेंगे। इस मिले हुए सुनहरे अवसर को भी गँवा लेंगे।

आप श्री हरि माँ के पास करुणा, दया, क्षमा के साथ साथ वह स्नेहासक्त हृदय भी है जो दुश्मन से भी दुश्मनी नहीं करता। ऐसे माँ प्रभु जी को दुःख छूते ही कहाँ हैं! मगर दूसरों के कर्मों पर दुःखी होकर ज़ार-ज़ार रोते हैं आप... यह देख कर कि आप जीव, कर क्या रहे

हैं! आप जीव की दयनीय अवस्था पर फूट-फूट कर रो पड़ते हैं।

- एक कहता है, 'आपको चोट तो नहीं लगी?'

- दूसरा चेत करता है व कहता है, 'आपको चोट लगने वाली है।'

भाई, ऐसे परम वन्दनीय, परम पूज्य के जीवन में छलकपट हो सकता है क्या? जो कभी भी अपना दामन बचा कर नहीं चलते। हम ही हैं, जो दोष मढ़ कर, स्वयं को समझ लेते हैं कि हमने स्वयं को बचा लिया...

ऐसा कहाँ होता है? हमें उनके हर वाक् में छिपे तत्व को पहचानना है, तभी तो इतनी सुन्दर जीवन अभिव्यक्ति में जीवन का सारांश हम पा सकेंगे। आपकी वाणी का परम सत्य बहुत ही अनमोल है, जिसे आप हमें अपने आशीर्वाद में लाकर हमसे ग्रहण करवा रहे हैं। आप श्री हरि माँ ने कहा, 'मैं बार-बार जीवन की सत्यता को आप सभी के लिए दोहराता हूँ।'

गर सच ही हम सभी पूज्य माँ को शास्त्रों की प्रतिमा मानते हैं तो उनके जीवन के विस्तार को तो देखें - जहाँ पावन जीवन की व्याख्या तो हर पहलू में भरी पड़ी है। फिर भी हम संशय करते हैं! तो कैसे मान लें, कि हमें कुछ आ जायेगा?

आप माँ ने कहा, 'अपनी बुद्धि, अपने चंचल मन को, जो हठीला है व अपने को सुन्दर समझता है, मुझे दे दो!' आपने करुणा करके मनाते हुये कहा, 'आ, जो सब तू अपनाये हुये है मुझे दे दे।' अर्थात् जब हमारा मन ख़ाली होगा, तभी कुछ ग्रहण कर पायेगा व जीवन में उस परम यथार्थता को ग्रहण कर पायेगा। इसी लिए कहा, 'आ, अपने को मुझसे जोड़ ले!' वाह सद्‌गुरु, वाह!

एक हम हैं, जो आपके असीम अनुग्रहों को देख ही नहीं पाते, देख कर भी! दूसरी तरफ़ आप, हमारे ही तद्‌रूप होकर हमें हमीं से उठाने में लगे हैं जिससे हम निष्पाप व निष्कलंक जीवन जी सकें। इतनी विनम्रता एक तरफ़ आपकी और दूसरी तरफ़ हमारा अहंकार... फिर भी अर्श तक ले जाने के लिए हम गिरे हुओं को फ़र्श से उठाने का सतत प्रयास कर रहे हैं आप। आप सचमुच धन्य हैं, जितना धन्यवाद करें आपका, वह कम ही है!

आपने कहा 'यह तो revealing knowledge है।' हम गर अपने को श्रेष्ठ समझने की भूल करते रहे व अपनी बुद्धि पे नाज़ करते रहे तो ऐसे अद्वितीय जीवन के, ऐसे सद्‌गुरु श्री हरि माँ प्रभु जी के श्री चरणन् में, हम बैठकर भी कहाँ बैठ पायेंगे?

मन्दिर में बैठ कर भी क्या हम सच ही बैठ पाये? अपने आप से यह प्रश्न पूछें! तभी हमें पता चलेगा जो हमें हमारे जीवन की सच्चाई का परिचय करवा रहे हैं क्या हमने उन्हें दिल से स्वीकारा है? स्वीकारा होता, तो आज उसी परम सत्य में जी रहे होते। फिर ज़ार-ज़ार रोते

हुये, यह पूछते तड़प कर कि, हे माँ! आप ही कृपा करी बताइये आपने किस तरह वहन-सहन किया हमें! किस तरह बरदाश्त किया इतनी ख़ामोशी से।

पश्चाताप के आँसुओं से भीगे मन से पूछते, कैसे आपने दिन-रैन बिताये होंगे हम सभी के साथ, जिन्होंने आपकी पीड़ा का कभी एहसास ही नहीं किया। आपके दर्द को कभी महसूस ही नहीं किया। आपका हृदय जो फूल की चोट से भी व्यथित हो जाता है, हम कभी शब्दों के बाणों से व कभी अनगिनत प्रहारों से आपके हृदय को बेधते रहे। कभी पीछे मुड़ कर नहीं देखा, आप पर क्या बीतती होगी? प्यार की मरहम लगाना तो बहुत दूर की बात है...

परम पूज्य माँ के साथ श्रीमती पम्मी महता, उनके पति, पुत्र व अन्य सदस्य

हे माँ, कैसी विडंबना है कि जहाँ आपसे हमने निरन्तर पाया ही पाया इतने निःस्वार्थ प्रेम आपके में, जहाँ इतने विनम्र व विनीत भाव से आपने कहा, 'आ, मुझे अपने समेत अपना सभी कुछ दे दे। मैं तुझे अपने समेत अपना सभी कुछ दे दूँगा!'

प्यार की इस पराकाष्ठा में, आपके अलौकिक दर्शनों की जा पर, हमने अपने हाथ खेंच लिए। जब आप माँ को इन हाथों की सख्त ज़रूरत थी; वहाँ आपके हाथों को झटक दिया एक ही पल में... ऊपर से इतने दोष मढ़ने शुरु किये कि पत्थर भी रो पड़ें। जिन्होंने अपने पास कुछ भी बचा कर नहीं रखा। अपने समेत अपना सर्वस्व लुटा दिया हम पर।

हे माँ, आप ही असीम अनुग्रह कीजिये जो हम आप में लौट चलें। हे जगद् जननी श्री हरि माँ, बस यही विनीत प्रार्थना करते हैं मन ही मन आपसे, हम में अपने प्रति श्रद्धा व भक्ति भर दीजिये। श्रद्धा व भक्ति भाव से सनाथ होकर ही आप श्री हरि से सनाथ रह पायेंगे हमेशा!

हम सभी जानते हैं, हम जैसे भी थे, आपने एक पल में हमें क़बूल लिया। एक बार ज़िक्र तक नहीं किया कि हम कैसे हैं! आपने तो अपने राम जी की ही वाणी सुनी -

''तुझको भेजा राम ने, मुझे राम ही मिल गया''

यह कह कर तहेदिल से हमें स्वीकार लिया। असीम वात्सल्यता से माँ ने अपनी प्यार भरी आग़ोश में हम सभी को समेट लिया और अपना हर श्वास हर पल हमपे लुटा दिया। आप माँ, बार-बार जीवन की परम सत्यता को हमारे लिए दोहराते रहे।

गर पूज्य माँ को शास्त्रों की प्रतिमा मानते हैं, तो विस्तार से देखने से पता चलेगा कि उनकी व्याख्या जीवन के हर पहलू में भरी पड़ी है। हम between the lines पढ़ें तो सही! उनका जीवन तो खुली किताब की तरह है। पढ़ कर देखें तो सही! हम क्यों नहीं अपने कठोर हृदयों को पिघलने देते? क्यों अपनी पलकों के नीचे अपनी स्वार्थता को दबा रखा है हमने? उनकी ज्योत्सना में आते ही कठोर हृदय पिघल जायेंगे। तब यह माँग पायेंगे आरत भाव में आकर, कि हमें अपनी शरण में रख कर माटीवत् जीने का आशीर्वाद दीजिये!

हे माँ, इस आत्म निरीक्षण की बेला में आ कर भी क्या हम आत्म अवलोकन कर पाये? नहीं न माँ! कैसे अनमोल जीवन प्रसाद को पाकर भी हम गँवा बैठे! वरना अपनी 'मैं' को पूर्णतः गलित होते देख कर व आपकी इस देन को पाकर धन्य-धन्य महसूस करते और कोटि-कोटि धन्यवाद करते ज़बान ही न थकती!

आज सच ही देख पा रहे हैं कि हमारी 'मैं' ने कहाँ पहुँचा दिया हमें। जिस 'मैं' से निजात पानी थी, उसी ने सर उठा लिया। फिर कैसे आपको दिये ज़ख्मों पर हम सभी प्यार की मरहम लगा पाते? कैसे अपने ही आँसुओं से उन ज़ख्मों को धो पाते?

एक तरफ़ हमारे ही जन्मों-जन्मों के अहंकार में किये पापों से व अहंकार से मुक्त करी हमें आप जीवन की उस परम सत्यता में लाने के लिये कितना भरसक व अनथक प्रयत्न कर रहे थे। दूसरी तरफ़ हमें पता ही न चला कि हमने अपने ही अहंकार को पुष्टित व पल्लवित करना शुरु कर दिया व स्थिति की माँग करने लगे।

हम सभी यही सोचने लगे कि हमें क्या मिला! एक पल के लिए भी ख़याल नहीं आया, हमने तो आपसे जन्म-जन्म की पूंजी पाई है। आपके क़दमों से तो सीस हमारे उठने ही नहीं चाहिए थे। माँगना ही था, तो हम यही माँगते - आइये, हुक्म रजाई रहने के लिए हमें उसी अपनी डगर पर राखिये, जहाँ हम कह पाते, 'हुक्म कीजिये हे श्री हरि माँ, जो हम उसे उठा पायें!'

हे श्री हरि माँ, हमें पुनः अपने में जागृत करी आगे से आगे ले चलिये...

हमपे अनुग्रह कीजिये...

किस क़दर ऋणी हूँ आप श्री हरि माँ प्रभु जी की।

हरि ॐ ❖

मंनै मारगि ठाक न पाइ...

(सत्य मानने वाले के रास्ते में कोई विघ्न नहीं आता।)

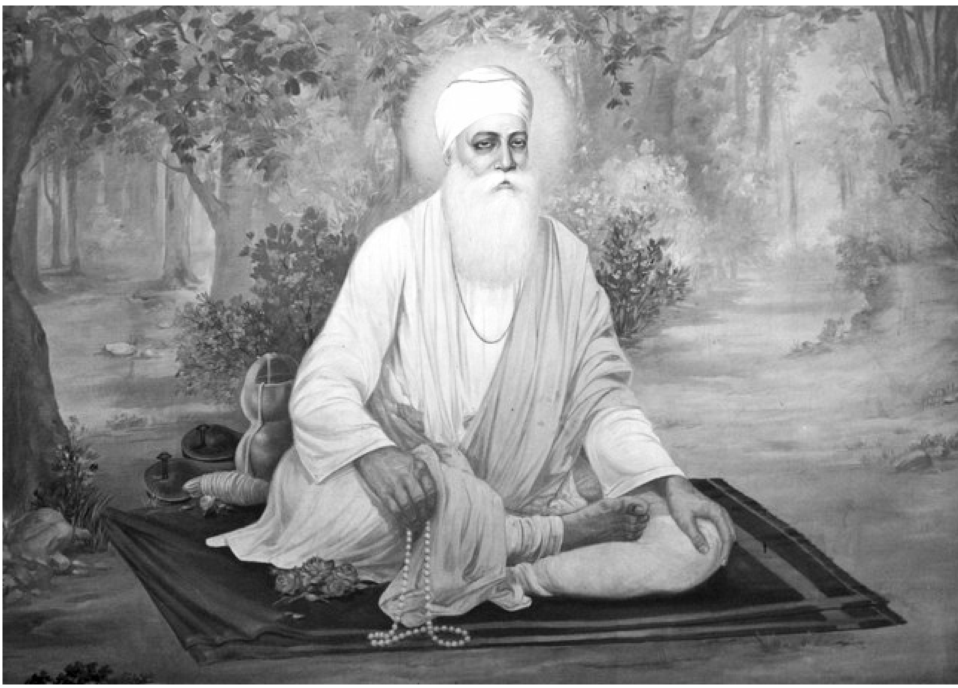

गतांक से आगे - **(अर्पणा प्रकाशन 'जपुजी साहिब' में से)**

पौड़ी १४

मंनै मारगि ठाक न पाइ।
मंनै पति सिउ परगटु जाइ।
मंनै मगु न चलै पंथु।
मंनै धरम सेती सनबंधु।
ऐसा नामु निरंजनु होइ।
जे को मंनि जाणै मनि कोइ।।१४।।

शब्दार्थ : (परमात्मा के नाम को) सत्य मानने वाले (साधक के) रास्ते में कोई विघ्न नहीं आता। जिसने उस परम पति परमेश्वर को सत्य मान लिया, वह सबका सम्मान पाता है। उसके लिये प्रभु साकार रूप धर कर प्रकट हो जाते हैं। (प्रभु को) मानने से अन्य वेषों के मार्ग पर नहीं चलना पड़ता (अर्थात् भिन्न भिन्न साधना के पथ नहीं अपनाने पड़ते)। (नाम को) मानने से धर्म के साथ (सीधा) नाता बन जाता है। परमात्मा का नाम ऐसा निर्मल होता है, जो कोई उसको मन में मान लेता है, वही उसे जानता है।

पूज्य माँ :

श्रद्धा पूर्ण प्रेम भक्ति में, जो मन खोये पथ पे बढ़े।
कोई विघ्न न छू सके उसे, नाम की नैया पर वह चढ़े।।१।।

पत राखो वा योग की नानक, आप परम वहाँ प्रगट भये।
प्रेम की नैया में जो बैठे, परम गति वह पा ही ले।।२।।

बहु पंथी बहु पंथ छोड़ के, सन्तन से सम्बन्ध करें।
श्रुति स्मृति हर धर्म त्यजी के, भक्तन् से वह जाये मिलें।।३।।

एक ही मालिक उसका हो, जो धर्म में ही खो जाये।
वही बन्धु वही मित्र है वाका, जो नाम रमण ही किये जाये।।४।।

ऐसा योगी कहाँ मिले, ऐसी श्रद्धा कहाँ मिले, जो तुझमें ही खो जाये।
नानक इतनी भक्ति दे, मन चरणन् में सो जाये।।५।।

बन्धु केवल परम गुणी, तव भक्त बन्धु हो जाये।
जो तेरे नाम में मग्न रहे, मनभावन वह हो जाये।।६।।

ऐसी महिमा नाम की, महा पावनी कहलाये।
माया परे तू मायापति, तव चरणन् में मिल पाये।।७।।

कैसे मानूँ निरंजन तू, करुणा न गर पाये।
मनोमल अब भंजित करो, तो ही समझ कुछ आये।।८।।

भक्ति दे मुझे नानका, चरण अनुरक्ति हो जाये।
ऐसी लग्न दे चरणन् में, मन और नहीं भटकाये।।९।।

नानक तेरे दर पे आके, सन्त हैं तुझको पाये।
मैं सन्त नहीं ओ नानका, कैसे शरण तेरी मिल जाये।।१०।।

ओ नानक नानक नानका, मेरा मालिक तू ही आप है।
तेरा नाम मैं क्या लूँ मालिका, यह नाम भी तू आप है।।११।।

जग में तुझसे दूर रहूँ, कस रहूँ जानी सब आप है।
जिस भाव में भी जब जब बैठूँ, हर भाव भी तू आप है।।१२।।

जहाँ जहाँ यह दृष्टि अब जाये, हर रूप भी तू आप है।
किस नाम से अब पुकारूँ मैं, हर नाम भी तू आप है।।१३।।

तेरी भक्ति की बातें न जानूँ, मैं बन्धु न, बन्धु न जानूँ।
संबंध की बातें न जानूँ, मैं धर्म कर्म भी न जानूँ।।१४।।

किसे कहूँ मैं बन्धु मेरा, कौन बन्धु मेरा बन जाये।
जब तू ही है उसमें भी खड़ा, जो सामने मेरे आये।।१५।।

क्या मानूँ तेरी नानका, कुछ समझ न आये।
समझ की बात ही दूर गई, अब चरण भक्ति मिल जाये।।१६।।

ओ नानक मेरे बादशाह, तुझे यह मन इतना चाहे।
परवरदिगार ग़रीबनवाज़, इनायत तेरी हो जाये।।१७।।

उदार चित्त दिलदार तू, दरियादिल कहलाये।
दीन प्रतिपालक मल विमोचक, दीन बन्धु कहलाये।।१८।।

ओ नानका मेरे नानका, हम तेरे दर पे आये।
फटी झोली बिन दामन के, हम दामन फैला के आये।।१९।।

इतना माँगें नानका, वहाँ नाम तेरा भर जाये।
बस नाम के प्यासे हैं, इतना ही मन चाहे।।२०।।

को' बन्धु को' न बन्धु, को' बन्धक राह में आये।
को' पथ तेरा तू कस प्रकटे, यह कछु समझ न आये।।२१।।

इतना माँगें नानका, नाम तेरा मिल जाये।
मानें साँचो नाम है, लिये धाम मिल जाये।।२२।।

नाम लिये तेरा नानका, नाम अब मिल जाये।
नानक मेरे नानका, नाम ही बस मिल जाये।।२३।।

ऐसी महिमा नाम की, कोई भक्त ही महिमा गाये।
मुझ जैसा ओ राम कहो, कैसे कुछ भी सुझाये।।२४।।

नाम निरंजन निर्मलकर, महापावनी होये।
निर्विकार करे मन को, गर मन नाम में खोये।।२५।।

पर समझ यह नहीं आता :-

कैसे लूँ मैं नाम, बुलाऊँ तेरा नाम।
'मैं' मिटे तो ले सकूँ, अब तो तेरा नाम।।१।।

सो नानक इतना ही कहूँ, मुझे भूले अपना नाम।।
तेरा नाम ही याद रहे, साँचो तेरा नाम।।
है साँचो तेरा नाम।।२।। ❖

क्रमशः

नित्य निर्विकार होने का प्रयत्न ब्रह्मचर्य है!

जिस नाम का अन्तकाल में स्मरण करने से मनुष्य तर जाता है, जिसे पाने के लिए लोग जीवन में ब्रह्म के समान यज्ञ करने के यत्न करते हैं - निम्नलिखित श्लोकों में भगवान श्री कृष्ण इसी का वर्णन अर्जुन से कर रहे हैं -

(परम पूज्य माँ ने गीता का विस्तार, 'भगवत् बाँसुरी में जीवन धुन' एक साधिका को करवाया। स्थान-स्थान पर उसे ही सम्बोधित करते हुए गीता के अर्थ समझा रहे हैं।)

कविं पुराणमनुशासितारम् अणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः।
सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूपम् आदित्यवर्णं तमसः परस्तात्।। ८/९

प्रयाणकाले मनसाचलेन भक्तया युक्तो योगबलेन चैव।
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक् स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।। ८/१०

भगवान अब कहते हैं कि :

शब्दार्थ :

१. जो योगयुक्त पुरुष,
२. सकल पुरातन, अनुशासन करने वाले सूक्ष्म से सूक्ष्मतर सबके धाता, अचिन्त्य स्वरूप, आदित्य वर्ण वाले, अंधकार से परे, (परमात्मा को),
३. प्रयाण काल में, अचल मन से,
४. भक्ति से युक्त होकर और योग बल से,
५. भ्रुवों के बीच में अच्छी प्रकार प्राणों को स्थापन करके, स्मरण करता है,
६. वह उस दिव्य परम पुरुष को प्राप्त करता है।

तत्व विस्तार :

ब्रह्म के गुण :

नन्हीं! पहले कुछ शब्दों के अर्थ समझ ले।

कविम् :

१. सर्वज्ञ को कहते हैं।
२. महाबुद्धिवान् को कहते हैं।
३. प्रतिभाशाली को कहते हैं।
४. त्रिकालदर्शी को कहते हैं।

पुराणम् :

१. सनातन को कहते हैं।
२. अनादि को कहते हैं।
३. अति प्राचीन को भी कहते हैं।

अनुशासितारम् :

१. अनुशासन करने वाले,
२. नियम बनाने वाले,
३. आदेश देने वाले,
४. नियन्त्रण करने वाले को कहते हैं।

अणोरणीयांसम् :

१. सूक्ष्म से सूक्ष्म ज़र्रा।
२. वायु के समान सूक्ष्म।
३. परमाणु के बराबर।

धातारम् :

१. पालन करने वाला।
२. धारण करने वाला।
३. सबका आधार।
४. धाता विधान को भी कहते हैं।

अचिन्त्य रूपम् :

१. जो चिन्तन में न आ सके।
२. जो शब्द बधित न हो सके।
३. जो बुद्धि का विषय न हो।
४. अचिन्त्य स्वरूप आत्मा को कहते हैं।
५. अचिन्त्य स्वरूप अतीन्द्रिय को कहते हैं।

आदित्य वर्णं :

१. सूर्य वर्ण को कहते हैं।
२. स्व प्रकाश स्वरूप को कहते हैं।
३. दीप्तिमान स्वरूप को कहते हैं।
४. नित्य प्रकाश करने वाले को कहते हैं।

तमसः परस्तात् :

१. अंधकार से परे यानि प्रकाश स्वरूप।
२. अज्ञान से परे ज्ञान स्वरूप।
३. मोह से परे विवेक स्वरूप।

जो जीव अनन्य भक्ति से युक्त होकर, ऊपर कहे गये विशेषणों वाले पुरुष से योग करने का अभ्यास करते हुए, अपने प्राणों को भ्रुवों में स्थित करके, तन के त्याग के समय निश्चल मन से उसका स्मरण करता है, वह तन को त्याग कर उसी दिव्य पुरुष को प्राप्त होता है। तब वह तन को त्याग कर उसी परम में समा जाता है।

इसलिये कहते हैं,

क) अव्यय, अविनाशी, सनातन तत्व पर ध्यान लगाओ,
ख) भक्ति युक्त होकर विश्व रचयिता, नियमन कर्ता पर ध्यान लगाओ,
ग) परम अनुमन्ता, नियन्ता, ईषणकर्ता पर ध्यान लगाओ,
घ) विश्व कारक तथा विश्व धारणकर्ता पर ध्यान लगाओ,
ङ) विश्व पोषणकर्ता, भरणकर्ता पर ध्यान लगाओ,
च) उसे सूक्ष्म से अति सूक्ष्म जानकर ध्यान लगाओ,
छ) अचिन्त्य, अदृश्य, सर्वव्यापी पर ध्यान

लगाओ,

ज) नित्य प्रकाश स्वरूप उसे जानकर उस पर ध्यान लगाओ,

तो तनत्व भाव त्याग कर तुम उसे ही पाओगे!

नन्हीं! इन सबसे संकेत आत्मा तथा परमात्मा की ओर है। आत्मा को चर्म चक्षु नहीं देख सकते वह यहाँ कहते हैं कि, 'भ्रुवों के बीच में प्राण स्थापन करके निश्चल मन से आत्मा का स्मरण करे,' यानि, आत्मवान् बनने के लिए तो जीवों को प्राणों से भी परे देखना होता है। साधक प्राणों के रहने या न रहने की परवाह नहीं करते। वह तो मानो प्राणों के पीछे रहने वाले दिव्य परम पुरुष, आत्म स्वरूप को देख रहे हैं।

नन्हीं! ऐसे भक्त के नयन स्थूल दृष्टि पर नहीं, आत्म तत्व पर टिके होते हैं। उसके नयन प्राणों से भी परे देखते हैं। उसका मन स्वतः निश्चल हो जाता है। ऐसा योगी, जो नित्य आत्मा में ही चित्त टिकाये हुए होता है, वह देह को त्यागकर दिव्य परम पुरुष को प्राप्त करता है। यानि,

क) वह स्वयं दिव्य पुरुष बन जाता है।
ख) वह आत्मवान् बन जाता है।
ग) वह परम पुरुष पुरुषोत्तम बन जाता है।
घ) वह तो भगवान ही बन जाता है।

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति विशन्ति यद् यतयो वीतरागाः।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये।। ८/११

जिस नाम को अन्तकाल में स्मरण करने से मनुष्य तर जाता है, उसकी स्तुति करते हुए अब भगवान कहते हैं :

शब्दार्थ :

१. **वेद वेता लोग जिसे अक्षर कहते हैं,**
२. **आसक्ति रहित 'यति' जिसमें प्रवेश करते हैं,**
३. **जिसे चाहते हुए वे ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं,**
४. **उस पद को मैं तुझे संक्षेप से कहूँगा।**

तत्व विस्तार :

भगवान कहने लगे, जिसे वेदज्ञ अक्षर कहते हैं, मैं तुम्हें वह पद सुनाऊँगा।

१. अक्षर वह होता है जिसका कभी नाश न हो।
२. अक्षर नित्य को कहते हैं।
३. अक्षर स्थिर को कहते हैं।
४. अक्षर नाश रहित को कहते हैं।
५. अक्षर सर्वत्र सर्वव्यापक को भी कहते हैं।
६. अक्षर आत्मा को भी कहते हैं।
७. अक्षर ब्रह्म को कहते हैं।

यानि,

क) पूर्ण वेदों के जानने वाले जिसे अक्षर कहते हैं;
ख) राग द्वेष से रहित होकर महा यत्नशील लोग जिसमें समाने के प्रयत्न करते हैं;
ग) जिसे पाने के लिए लोग ब्रह्ममय आचरण करने का व्रत धारण करते हैं;
घ) जिसे पाने के लिए लोग जीवन में ब्रह्म के समान यज्ञ करने के यत्न करते हैं;
ङ) जिसे पाने के लिए लोग जीवन भर ब्रह्म के समान मौन धारण करने का अभ्यास करते हैं;
च) जिसे पाने के लिए लोग जीवन भर

ब्रह्म के समान अखिलभूतात्मभूत मानने के प्रयत्न करते हैं;

भगवान कहते हैं, उस पद को मैं कहूँगा, जिसमें पूर्ण ब्रह्म, पूर्ण आत्म स्वरूप तत्व समाहित है; जिसमें पूर्ण ब्रह्म की पूर्णता समाहित है; जिसमें साधक का पूर्ण लक्ष्य समाहित है।

नन्हीं! यहाँ एक बात स्पष्ट है कि ब्रह्म में प्रवेश करने के लिए:

१. राग रहित होना अनिवार्य है।
२. योग के लिए यत्न करना अनिवार्य है।
३. ब्रह्मचर्य धारण करना अनिवार्य है।

*ब्रह्मचर्य

नन्हीं जान! ब्रह्मचर्य को पहले भी समझाकर आये हैं, पर इसको पुनः समझ ले।

ब्रह्मचर्य,

क) ब्रह्मवत् आचरण को कहते हैं।
ख) जीवन में ब्रह्म के समान आचरण विधि को कहते हैं।
ग) ब्रह्म के समान जीवन में स्थिति को कहते हैं।
घ) धार्मिक अध्ययन तथा अभ्यास को भी कहते हैं।
ङ) ब्रह्म के अनुष्ठान को भी कहते हैं।
च) ब्रह्म की तरह सब कुछ करते हुए अखण्ड मौन रहने के प्रयत्न को कहते हैं।
छ) ब्रह्म की तरह पूर्ण में पूर्णता पाने के अभ्यास को कहते हैं।
ज) ब्रह्म के गुणों को ग्रहण करके उनसे पुष्टि पाने के अभ्यास को कहते हैं।
झ) ब्रह्म नित्य निर्विकार हैं, नित्य निर्विकार होने का प्रयत्न ब्रह्मचर्य है।
ञ) ब्रह्म यज्ञ स्वरूप हैं और अखण्ड यज्ञ के कर्ता हैं। जीवन में यज्ञ का अनुष्ठान करना ही ब्रह्मचर्य है।
ट) नन्हीं जान्! ज्यों ब्रह्म सबमें एक रस स्थित है वैसे ही अद्वैत में स्थित होने का अभ्यास ब्रह्मचर्य है।
ठ) ब्रह्मचारी एक इन्द्रिय का संयम नहीं करते, वे तो सम्पूर्ण इन्द्रियों का संयम करते हैं। वे अपनी रसना को भूलते हुए, दूसरों को सुख देते हुए, नित्य तृप्त हो जाते हैं। यह ब्रह्मचारी के ब्रह्मचर्य का अभ्यास है।
ड) ब्रह्मचर्य में अपने आपको भूलना होता है और अपने मानसिक प्रतिद्वन्द्वों पर संयम करना होता है।
ढ) ब्रह्मचारी का जीवन साधारण ही होता है किन्तु चित्त नित्य परम में टिका हुआ होने के कारण वह विलक्षण होता है।

नन्हूँ!

१. कृष्ण बाल ब्रह्मचारी हैं।
२. कृष्ण ब्रह्मचर्य का स्वरूप हैं।
३. कृष्ण ब्रह्मचर्य का रूप हैं।
४. कृष्ण ब्रह्मचर्य का प्रमाण भी हैं।
५. कृष्ण ब्रह्मचर्य घन भी हैं।
६. कृष्ण का जीवन ही अखण्ड ब्रह्मचर्य का ज्ञान है।

यदि यह सत्य है तो ब्रह्मचर्य का प्रचलित अर्थ व्यर्थ हो जाता है।

नन्हूँ! यदि ब्रह्मचर्य के प्रचलित अर्थ को सच मान लें तो :

क) कोई भी गृहस्थी अपना घर छोड़े बिना ब्रह्म को नहीं पा सकता।
ख) कोई भी गृहस्थी जीवन को यज्ञमय नहीं बना सकता।

* ब्रह्मचर्य के विस्तार के लिये ६/१४ देखिये।

ग) तब तो सहज जीवन से पलायन करके ही जीव ब्रह्मचर्य का अनुष्ठान कर सकता है।

नन्हीं! भगवान ने कभी भी जीवन से भाग जाने के लिये नहीं कहा।

१. उन्होंने कहा, संग त्याग को ही संन्यास कहते हैं। संग त्याग से जीव तर जाता है।
२. उन्होंने कामना त्यागने को कहा है, विषयों के त्याग का आदेश नहीं दिया।
३. उन्होंने क्रोध त्यागने को कहा है, क्रोधास्पद का त्याग करने को नहीं कहा।

ब्रह्म ने किसी को नहीं छोड़ा, भगवान ने स्वयं किसी को नहीं छोड़ा। यदि ब्रह्मचर्य स्वरूप भगवान अपने घर में साधारण जीवन व्यतीत कर सकते थे, तो ब्रह्मचर्य को उससे विपरीत जीवन प्रणाली मान लेना भूल है।

भगवान-ज्ञान तथा शास्त्र :

नन्हीं! एक बात ध्यान से समझ ले! गीता का जो शब्द आपकी समझ में भगवान के जीवन में लागू नहीं होता तो सावधान हो जाना और यह जान लेना कि तुम्हारे :

१. शब्द के अर्थ में ग़लती हो सकती है, भगवान में नहीं।
२. तुम्हारे प्रयोग अर्थ में ग़लती हो सकती है, भगवान में नहीं।
३. भगवान का जीवन गीता ही है। यदि गीता भगवान की वाङ्मय प्रतिमा है तो भगवान का तन उसी की (गीता की) सप्राण मूर्ति है।
४. ज्ञान ने तथा गीता ने अपना समर्थन भगवान के जीवन से पाया है।
५. ज्ञान ने तथा शास्त्रों ने अपना अर्थ भगवान के जीवन से पाया है।
६. शास्त्रज्ञान पर प्रकाश भगवान का जीवन डालता है।

अध्यात्म क्या है, उसका रूप क्या है और स्वरूप क्या है, यदि यह जानना है तो भगवान के जीवन को देख लो।

नन्हीं! गीता भगवान का स्वरूप है तो उनका जीवन उसका रूप है। गीता उनका वाक्, उनकी बुद्धि है तो उनका जीवन उनके अखण्ड मौन का प्रमाण है। भगवान कहते ही उस तनधारी को हैं जो अध्यात्म का प्रकट रूप हो। भगवान का जन्म ही इस कारण होता है ताकि जो ज्ञान साधुओं को समझ नहीं आ रहा, उस पर वह पुनः प्रकाश डालें।

नन्हूँ! जब भगवान जन्म लेते हैं, तो न ही वह सम्पूर्ण पापियों को मार सकते हैं और न ही वह सम्पूर्ण साधुओं का संरक्षण कर सकते हैं। साधुता गुमानी तो उन्हें पहचानते भी नहीं। ज्ञान गुमानी तो उन्हें जानते ही नहीं। वह तो सहज जीवन में अध्यात्म सिद्ध करते हैं, तथा अध्यात्म का प्रमाण देते हैं।

क) वह तो निरन्तर मौन होते हैं, उनका जीवन अखण्ड मौन का प्रमाण होता है।
ख) वह तो नित्य ब्रह्मचारी ही होते हैं, उनका जीवन नित्य ब्रह्मचर्य का प्रमाण होता है।
ग) वह तो नित्य उदासीन ही होते हैं, उनका जीवन अखण्ड उदासीनता का प्रमाण होता है।
घ) यदि उदासीनता स्वरूप का गुण है तो अखण्ड प्रेम उसी का रूप है।
ङ) यदि ब्रह्मचर्य स्वरूप में निहित है तो सबसे तद्‌रूपता ही उसका रूप है।
च) यदि अखण्ड मौन स्वरूप में निहित है तो जीवन भर कहे गए वाक् ही उसका रूप हैं।

यदि इसका राज़ समझ न आये तो अध्यात्म को समझना कठिन है।❖

वैदिक विवाह

विवाह संस्कार में सम्मिलित होने का अवसर तो हम सब को मिलता है परन्तु वहाँ जो मंत्र संस्कृत में पढ़े जाते हैं उनका अर्थ समझ नहीं आता। अर्पणा मन्दिर में परम पूज्य माँ की अध्यक्षता में कई दम्पत्ति परिणय सूत्र में बंधे। मंत्रों में निहित गुह्य तत्व सार को समझने के लिये उन्होंने स्थान-स्थान पर पूज्य माँ से प्रश्न भी किये। प्रत्योत्तर में उन के गुह्य अर्थ परम पूज्य माँ के मुखारविन्द से स्वतः ही प्रवाहित हो गये -

'चूड़ा रस्म'

वधू : माँ! यह 'चूड़ा' क्या महत्त्व रखता है?

पूज्य माँ : चूड़ियाँ आईं प्रेम भरीं, मातु जननी कुल लाज भरीं।
जन्म दायिनी के कुल की लाज, नन्हीं तेरे साथ चली।।१।।
आन्तर मैं है श्वेत रंग, बाहर है लालो-लाली।
मोह की लाली झड़ जाए, तब ही होये हरियाली।।२।।
याद रहे किस कुल की लाज, तू अपने हाथ लिये जा रही।
इन सबका है आशीर्वाद, जो संग लिए तू जा रही।।३।।
केवल आसीस ही यह नहीं, कुल मर्यादा लिए जा रही।
कलंक इनपे न आए, तू आँख झुका के जा रही।।४।।
दर्शन में है रजोगुण, निहित सतोगुण छिपी हुई।
परम गुण तू निभा देना, कुल की आस संग जा रही।।५।।
सीस झुका के चरण में, कहो वही लाज है तुम्हारी।
जननी कुल की लाज जो, मुझे अपनी जान से है प्यारी।।६।।
आओ पहराओ हथकड़ियाँ, मेरी बाल्य अवस्था चली गई।
गृहस्थाश्रम की ओर चली, मेरी व्यक्तिगतता चली गई।।७।।
माँ मेरी तू न घबरा, मैंने नयन में यह लाज भरी।
कुल मर्यादा मान प्रेम, हृदय में मैंने आज धरी।।८।।

वधू : कुल की लाज कैसे निभे?

पूज्य माँ : कुल की लाज की पूछो तुम, वह नयन में होती है।
आँखों में गर लाज बसे, नारी सफल तब होती है।।

कुल प्रेम और कुल मर्यादा, आँखों में ही रहती है।
हृदय में सत्यता भरी रहे, तब लाज साथ ही रहती है।।

यह चूड़ियाँ एक नव कुल संबंध रूपा बंधन का प्रतीक हैं। तुम्हारा जीवन देखने में रजोगुणी और वास्तव में सतोगुणी होना चाहिए, यही यह चूड़ियाँ कह रही हैं। यही आशीर्वाद तेरे मातृ भाई, उनकी बहुएँ, मातृ बहिनें, उनके पति तथा सम्पूर्ण कुल तुझे आज दे रहा है। साथ ही मानो कह रहे हैं, ज्यों हमारी बेटी समान बहन ने अपने कुल से निभाई है, उससे भी अधिक सुन्दर ढंग से तुम अपने नव जीवन में निभा देना, यही चूड़ियाँ तेरे सुहाग तथा सौभाग्य की प्रतीक हैं। इन्हीं में वह अमर और अटल संबंध निहित है जो तेरी माँ का अपने पति से है। वह बिन कहे कह रहे हैं, 'हमारी लाडली बहन और बेटी ने जिस प्रेम से यह संबंध निभाया है, उसी प्रेम को तुम आगे ले जाओ और उसका विस्तार करो।' इन चूड़ियों में इनका ही नहीं, इनके पुरखों का भी प्रेम भरा है।

तत्पश्चात् कन्या को चूड़ा पहनाया जाता है

विवाह संस्कार

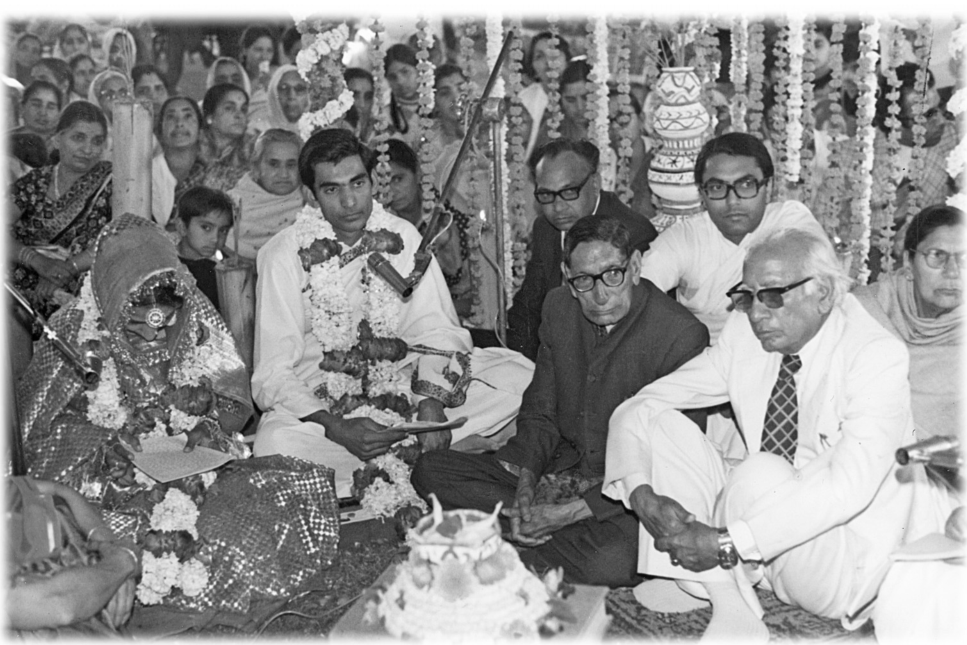

वर-वधू : हे परम पावनी माँ! आज, कर जोड़ी नतमस्तक हो विनीत भाव से हम प्रार्थना करते हैं कि आज हम इस नए आश्रम में क़दम धरने जा रहे हैं। इस पावन अवसर पर, इस विवाहित धर्म को निभाने की विधि समझने की इच्छा से हम आपके चरणों में बैठे हैं। हम संस्कृत भाषा नहीं जानते, इसलिये

हिन्दु संस्कृति के अनुरूप सरल भाषा में इस विवाह यज्ञ को समझना चाहते हैं।

वर को सम्बोधित करके

पूज्य माँ : बेटा! जो मंत्र वैदिक संस्कार विधि में गृहस्थाश्रम प्रवेश के लिए कहे गये हैं, उन्हें, अपनी भावनाओं और अभिलाषाओं तथा लक्ष्य को सामने रखकर तुम सर्वप्रथम वधू के माता पिता से इस शुभ संयोग के लिए आशीर्वाद लो।

वधू के पिता से अनुमति लेते हैं

वर : हे पिता श्रेष्ठ! बड़ों के आशीर्वाद और गुरुजनों की अनुमति के पश्चात् मैं आपकी कोमल हृदया कन्या को वधू रूप में माँगता हूँ। यदि आप मुझे स्वीकार करें तो मैं कृतज्ञ और कृतार्थ होऊँगा।

वधू के पिता : हे वत्स! तुमसा वर पाकर मेरा कुल, मेरी कन्या तथा मैं, हम सब ही कृतार्थ होंगे। पूज्य माँ का आशीर्वाद पाकर मैं सहर्ष तथा मुदित मन से अपनी कन्या तुम्हें तथा तुम्हारे कुल को देने की अनुमति देता हूँ। मैं विनीत भाव से भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि हमारे दोनों कुल सत्य, सौंदर्य तथा आनन्द की ओर बढ़ें।

वर : माँ! हम व्यक्तिगत साधना और व्यक्तिगत शुभ कर्म तो जान गये हैं। अब इस ज्ञान को व्यावहारिक सत्ता में लाकर समष्टि में समाना चाहते हैं। अपने एकाकी भाव तथा अद्वैत तत्व को समष्टि रूप में, पूज्य भाव से, हम जीवन के प्रमाण सहित वर्धन करना चाहते हैं। हम केवल विवाह ही नहीं करना चाहते बल्कि गृहस्थाश्रम बनाना चाहते हैं।

पूज्य माँ : तुम जिस आश्रम में प्रवेश करने की सोच रहे हो, उसे पहले समझ तो लो। 'गृहस्थ' एक 'आश्रम' होता है, जिसमें सब लोगों को ठौर मिलती है। आश्रम में आए हुए अतिथि की लाज आपकी लाज होती है। विवाह कुलों का होता है और सबका सुख, मर्यादा तथा मान साँझा होता है। क्या तुमने अपने नाते बंधुओं की लाज अपनी आँखों में रख ली है? क्या कुल वर्धन की चाहना है? याद रखना यह विवाह नहीं हो रहा, गृहस्थाश्रम में प्रवेश हो रहा है।

वर : **ईशा वास्यमिदꣳ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।**
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद् धनम्।।

भावार्थ : सम्पूर्ण जग में जो कुछ भी स्थूल, सूक्ष्म, कारण या जड़ चेतन है, वह उस सर्वशक्तिमान् परब्रह्म की सत्ता से व्याप्त है। पूर्ण ब्रह्म है, इसी भाव से जग में विचरना चाहिये। यहाँ स्थूल के त्याग की नहीं बल्कि मोह और आसक्ति के आंतरिक भाव के त्याग की बात कही है। जग में रहकर त्याग भाव, यानि संग त्याग कर भोग करने का आदेश देते हैं क्योंकि स्थूल वस्तु या द्रव्यधन, मान धन, ज्ञान धन सब उसी ब्रह्म का है।

पूज्य माँ : तुम्हारी नित्य यह प्रार्थना होनी चाहिए :

भगवान यह सब कुछ तेरा है, यही मान के भोग करूँ।
जिसको भी जहाँ देखूँ अब से, उसमें ही तुझे देखूँ।।१।।

भोग में योग ही नित्य रहे, तव कृपा न गर भूलूँ।
जहाँ पे दृष्टि जाये पड़े, नयनों से तुझे छू लूँ।।२।।

हर वस्तु हर रूप में भगवन्, तेरी छवि नित देखा करूँ।
जो भी लब अब वाक् कहे, बिना नाम कछु न कहूँ।।३।।

हर नाम जो जब भी लूँ भगवन्, मैं तो तेरा नाम ही लूँ।
मंत्र पठन फिर कौन करे, मैं स्वयं ही मंत्र बनूँ।।४।।

भोग में भी तब योग रहे, गर नाम न भूल सकूँ।
नतमस्तक हो कर जोड़ी, इतनी मैं बिनती करूँ।।५।।

वर : माँ! आज आपकी कृपा से मुझे जो आदेश प्राप्त हुआ है उसे मैं शिरोधारण करता हूँ और आपसे आशीर्वाद माँगता हूँ कि मैं इस आदेश को अपने जीवन में उतार सकूँ। यह मेरा बड़ा सौभाग्य है कि साक्षात् ब्रह्मवाक् आपसे श्रवण करने का सुअवसर मुझे इस जीवन में मिल रहा है। यही प्रार्थना है कि राम मुझे यह सौभाग्य जीवन पर्यन्त देते रहें और मैं इसी प्रकार आपकी छत्रछाया में साधना पथ पर आगे बढ़ता हुआ आपका अमृतपुत्र बन सकूँ।

वधू : मैं हमेशा माँ बाप की आज्ञा में रही हूँ। मैं आपकी, छोटे माँ की और बाक़ी बुज़ुर्गों के प्रेम और कृपा दृष्टि के नीचे पली हूँ। मुझे विपरीत और अनुकूल की अभी तक समझ ही नहीं है, क्योंकि भगवान की महाकृपा से मैं पूर्णतयः सुरक्षित रही हूँ। माँ! आज भागवत कृपा और आपके चरणों की कृपा स्वरूप जो वर मुझसे विवाह करना चाह रहे हैं, वह भी परम चरण सेवक तथा भागवत प्रिय हैं। मैं आपसे इतनी ही याचना करती हूँ कि मैं आपकी, अपने पति की, पति कुल तथा पूर्ण संसार की आयु पर्यन्त सेवा ही करती रहूँ। आपकी प्रेम सुगन्ध मेरी हृदयवासिनी बनकर मुझे इसी प्रेम में बहाती रहे। मुझे आशीर्वाद दीजिये।

पूज्य माँ : जिस कुल की जाई तू, जहाँ पे तेरा वास हुआ।
तू ख़ुद कहे इस कुल में, तुझे दुःख नहीं छू सका।।१।।

विपरीतता कबहुँ न आई, ऐसा कबहुँ नहीं हुआ।
कष्ट कभी भी पाया नहीं, ऐसा भी कभी नहीं हुआ।।२।।

तूने देखा महा प्रेम से, मन तेरा प्रेम में झुका रहा।
इस कारण तू जान ले, निरन्तर तन मन सुखी रहा।।३।।

अपने कुल की बात यह, दुःख में दुःख कभी नहीं हुआ।
किसी का दुःख देख लिया, पल में हृदय तेरा भरी आया।।४।।

गर ऐसी बात ही होती रही, मन दूजे में खोता रहा।
कभी भी दुःख न देखेगी, गर सबमें मन खोता रहा।।५।।

गर 'मैं' को स्थापित करना है, तो महा दुःखी मन होयेगा।
गर दूजा स्थापित करना है, दुःख कभी नहीं होयेगा।।६।।

वर : आप हमें ईश उपनिषद् का द्वितीय मंत्र समझाइये ताकि यह हमारे रोम रोम में अंकित हो जाए और हम कभी इससे विमुख न हों।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।

पूज्य माँ : जो कहा जो माना, निभाते हुए जीयें।
हर पल त्याग भाव से, जग सजाते जीयें।।१।।

सौ वर्ष आयु हो भगवन्, तुझे ध्याते हुए जीयें।
बिन कहे कहें राम राम, तव महिमा बनी जीयें।।२।।

केवल तोरे कर्मन् को, अब जीवन में जीयें।
सबको सुख ही देंवें हम, जितनी घड़ियाँ जीयें।।३।।

लिप्त कभी न होंये हम, निर्लिप्त होकर जीयें।
ऐसी सेवा हम करें, सबके लिये जीयें।।४।।

जितना अपना तन प्रिय, उतना हर तन से प्रेम करें।
ज्यों क्षमा निज मन को करें, उतनी क्षमा हर मन को करें।।५।।

अद्वैत भाव में आने को, अब जीवन हम माँगा करें।
तद्रूप दूजे के होने को, गृहस्थाश्रम की माँग करें।।६।।

जो भी पथ अब राम कहो, अपनाते हुए जीयें।
हर वाक् है जो उपनिषदन् का, लक्ष्य बना कर हम जीयें।।७।।

वर : माँ! मुझे फिर से समझाइये कि हम दोनों किस दृष्टिकोण से जीयें कि यह भाव सार्थक हो?

पूज्य माँ : संस्कृत संस्कृति तथा वैदिक गृहस्थाश्रम प्रवेश पद्धति में व्यक्तिगत विवाह की बात कहीं नहीं कही। वहाँ पारस्परिक योग तथा जीवन में सद्गुणों के प्रवाह की ओर ले जाने वाले सब मंत्र हैं। दैवी गुण समष्टिगत हैं। वह कुल वर्धक ही हैं। वह एक कुल से दो कुल और सम्पूर्ण नाते रिश्तों से मिलन कराते हुए जीव का विकास देवत्त्व की ओर करते ही जाते हैं। कन्या कुल तथा वर कुल के सदस्य, नाते रिश्ते, बन्धु, मित्र तथा सबके एक कुल में, एक आश्रम में और एक अव्यक्त डोरी से बन्ध जाने से ही गृहस्थाश्रम

बन जाता है। यदि अपने लिए जीना हो तो सभ्यता, संस्कृति तथा मानवता के विपरीत जीता हुआ जीव एक पत्थर हृदय मूर्ति बन जाता है। यदि इस मिलन में सत्यता भर दें तो जीव अपने आपको सबके तद्‌रूप करता हुआ, सबका सजातीय होता हुआ, जीवन में अद्वैत तत्व को फलीभूत कर लेगा।

प्रेम सबके लिये होता है, प्रेम स्वभाव होता है। भगवान का जीवन प्रेम ही है। यदि सच्चा प्रेम हो तो नित्य निर्लिप्त रहोगे तथा नित्य त्याग भाव में जीयोगे। यदि तुम अपना छोटा सा नया कुल बनाकर उसे ही अपना मानने लगे, तो इस आश्रम में प्रवेश करने का अर्थ व्यर्थ हो जायेगा। यह आश्रम है, आश्रम में अनेकों कुल रहते हैं। अनेकों व्यक्ति संग्रह से नहीं, अनेकों कुल संग्रह से आश्रम बनता है।

यदि तुम दोनों को यह याद रहा तो तुम परम पथ पथिक ही हो और परम पद की ओर बढ़ते ही जाओगे। यदि गृहस्थाश्रम के तत्व को जान लिया तो सबकी सेवा करते हुए यज्ञशेष ही खाओगे। जब जीवन यज्ञमय हो जाये तब प्रेम, सुख और आनन्द यज्ञशेष रूप में आपको मिल ही जायेंगे और आपका सेवा रूप प्रसाद संसार को मिल जाएगा।

वर : माँ! मेरे मन में एक संशय उठा है कृपया इसे निवारण कीजिये। नित्य निर्लिप्तता, उदासीनता तथा नित्य वियोगी, योग स्वरूप याचक मैं इस आश्रम को कैसे निभा पाऊँगा? कहीं राहों से विचलित तो नहीं हो जाऊँगा?

पूज्य माँ : नन्हें शिशु तू मत घबरा, मेरे लाडले सत्यता देख ले।

अपने प्रति हो उदासीन, गृहस्थ लाज तब ही निभे।।१।।

भगवान राम भगवान कृष्ण, उदासीन निज प्रति वह थे।
निज तन प्रति निर्लिप्त थे, कुल प्रति संलिप्त वह थे।।२।।

निज तन मन बुद्धि प्रति, वियोग हो तो योग है।
निज तन मन बुद्धि प्रति, संयोग हो तो भोग है।।३।।

कर्त्तव्य परायण जान ले, उदासीन ही हो सके।
सबको अपना मान करी, निर्लिप्त उनमें खो सके।।४।।

गर संग हुआ तो न्याय मिटे, मान अपमान में पड़ जाए।
गर संग कहीं पर नहीं रहा, तो प्रेम की बगिया फल पाए।।५।।

एक फूल से संग न कर, तू बगिया का माली है।
पूर्ण जग इक आश्रम है, वा पूजन तेरी आरती है।।६।।

आरत भाव में बैठ करी, तद्‌रूपता रूप आरती लो।
तव वधू गर साथ दे, महायज्ञ तुम कर सको।।७।।

सो मत घबरा अब बढ़ता जा, महायज्ञ है होने लगा।
अकेले में जो बातें कहीं, अब इम्तहान होने लगा।।८।।

यदि तुझमें सत्य प्रियता है और जो श्लोक तूने शास्त्रज्ञान का कवच पहन कर पढ़े हैं, उनको सार्थक करना चाहते हो, तो तुम सारे संसार का भोग करते हुए भी नित्य निर्लिप्त, उदासीन ही रहोगे और योग की ओर बढ़ते ही जाओगे। तब ज्ञान, मान, धन, वैभव, ऐश्वर्य तथा पूर्ण संसार की नेहमतें तुझे योग के पथ से विचलित नहीं कर सकेंगी। यदि तू इस पथ से डगमगा भी गया तो भी अब सुख तेरा साथ नहीं छोड़ेगा। इसलिये तू क्यों घबराता है? उपनिषदों की यह प्रार्थना अपने हृदय में धर लो।

ॐ आप्यायन्तु ममाङ्गानि वाक् प्राणाश्चक्षुश्रोत्रमथोबलमिन्द्रियाणि च सर्वाणि। सर्वं ब्रह्मौपनिषदं माहं ब्रह्म निराकुर्यां मा मा ब्रह्म निराकरोत् अनिराकरणमस्त्वनिराकरणं मेऽस्तु। तदात्मनि निरते य उपनिषत्सु धर्मास्ते मयि सन्तु, ते मयि सन्तु।।

ओम् कही के नमन करूं, कर जोड़ी मैं बिनती करूं।
पूर्ण जो हूँ जैसा हूँ, मैं केवल मात्र तुम्हारा हूँ।।१।।

वाणी प्राण नेत्र श्रोत्र, राही सिमरन तोरा करूं।
पुष्टित करो मम अंग अंग, मैं तोरे चरण में रह सकूँ।।२।।

उपनिषदन् प्रतिपादित ब्रह्म को, अस्वीकार मैं नहीं करूं।
ब्रह्म भी मुझ को न छोड़ें, अटूट संबंध में अब रहूँ।।३।।

उपनिषदन् प्रतिपादित तत्व, की प्रतिमा मैं बन जाऊँ।
हर इन्द्रिय समर्थन राह, उपनिषदन् लेखनी बनूँ।।४।।

जिह्वा से तोरी बात करूं, नयनों से तुझ को देखा करूं।
क़दम तुम्हारी ओर बढ़ें, श्रवण तुम्हारा नित्य करूँ।।५।।

नयनों से अब प्रेम बहे, तुम सम सब को अपना लूँ।
पूर्ण जीव तुम्हारे हैं, जान करी मैं नमन करूं।।६।।

तत्पश्चात् वधू वर से कहने लगी

वधू : मैं भगवान में श्रद्धा रखती हूँ और भगवान की चाकर हूँ। आपको आपके कथन अनुसार भागवत पुत्र मानकर तथा पितु आदेश शिरोधारण करते हुए आपकी चरणरज से अपनी माँग भरना अपना सौभाग्य समझती हूँ।

हे परम पथ पथिक! सत्यप्रिय! आपकी सहयोगिनी होने के नाते मैं आपकी आज्ञा का पालन करना अपना अहोभाग्य मानूँगी, किन्तु आपके अनुचित तथा अन्यायपूर्ण कर्मों में सहयोग न दूँगी।

वर : मैं हृदय से तुम्हारे साथ सहमत हूँ कि तुम मेरे झूठ और पाप में साथ न दोगी, यदि ग़लती भी करूं तो तुम रोक देना। मुझे ऐसी ही धर्म परायण सहयोगिनी का सहयोग चाहिये।

वधू : आपके कुल, गृहस्थाश्रम की मर्यादा तथा गौरव के संरक्षण के लिये मैं अपने रक्त की हर बूँद जल की तरह बहा दूँगी। मैं प्यार में पली हूँ, मुझे केवल प्यार तथा सेवा करनी आती है। केवल यही मेरे जीवन का आसरा है और मेरी विनीत पूजा है। द्वेष तथा दुश्मनी मुझे नहीं आती। मेरे लिये सब जीव तथा परिस्थितियाँ भगवान रचित हैं। मैं भगवान से और आपसे यही एक आशीर्वाद माँगती हूँ कि आपके संयोग से मुझे जो मिले, मैं उसे भागवत पूजन में अर्पित कर दूँ।

वर : मैं तेरे प्यार को इसी तरह फलता फूलता देखूँ। मुझमें भी तुझे जो सेहरे से दीखते हैं, भागवत कृपा, कुल तथा जिस आश्रम में मैं पला हूँ, वह उन्हीं के गूँथे हुए हैं। इन सेहरों में उन्हीं के प्रेम, करुणा, ममता तथा आशीर्वाद की महक है। मैं इन्हें परम प्रिय तथा भागवत देन मानकर तुम्हारे संरक्षण तथा इनके वर्धन के लिये तुम्हे देता हूँ। मेरे अहोभाग्य हैं कि भगवान तुम जैसी भागवत प्रिया तथा भावुक को मुझे वधू के रूप में दे रहे हैं। हम नित्य सप्रेम अखिल संसार में सुख बाँटते रहें, परम प्रेम और आनन्द में विलीन रहें। आज से यही हमारी प्रार्थना होगी।

मैं अकेला था तुम मिल गए तो हम पूर्ण हो गए। जिसमें पूर्ण संसार समाहित है, ऐसे ही जीवन में आनन्द और सौन्दर्य है, यह जानते हुए और मानते हुए हम आगे बढ़ें।

वधू : मुझे ऐसे वर की आकांक्षा थी जो मेरे और अपने सतीत्व पर आँच न आने दे तथा मेरी सतवर्धक भावनाओं का नित्य संरक्षण करे। मेरी सद्‌भावना, परम प्रेम और परम मिलन अभिलाषा की लाज रखे।

मैं आपमें यह लक्षण देख रही हूँ। मेरे अहोभाग्य हैं कि आप से मेरा योग हो रहा है।

(पूज्य माँ से)

वधू : माँ! मैं कैसे पल पल झुकती जाऊँ?

पूज्य माँ : तुम तो यही कह सकती हो -

इक पल अब न भूलूँ राम, झुकाव तुम्हारा नाम है।
क्षमा दया और करुणा राम, मिटाव तुम्हारा नाम है।।१।।

लब मेरा चाहे नाम न ले, पर प्रेम तुम्हारा नाम है।
प्रेम हृदय से बहा करे, यही जीवन का काम है।।२।।

कर्त्तव्य सेवा नित्य करूँ, इसी में तुम्हारा नाम है।
आरती ख़ुद ही बन जाऊँ, यही तुम्हारा नाम है।।३।।

राग द्वेष मन से मिटें, पावन तुम्हारा नाम है।
चरण धूलि बन नित्य रहूँ, तोरे चरण मेरा धाम है।।४।।

पल पल झुकती जाऊँ मैं, झुकाव तुम्हारा नाम है।
नाम की लाज निभाऊँ मैं, वहीं परम विश्राम है।।५।।

क्रमशः

राम पुकारे राम मिले,
पुकार में सत्यता चाहिये!

पिताजी - जीव और ब्रह्म के बीच अहं भाव की दीवार खड़ी है। जीव कैसे साधना करे कि इन दोनों का मिलाप हो सके।

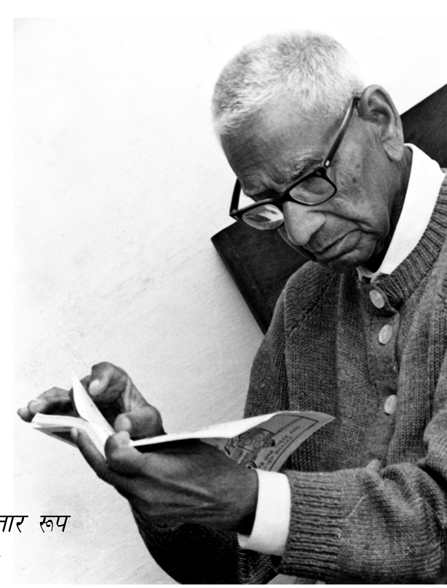

परम पूज्य माँ-

प्रश्न अर्पण - ब्रह्म में और जीव में,
अहं दीवार यह बन जाये।
तुम ही कहो फिर राम मेरे,
मिलाप क्योंकर हो पाये?१।।

कौन साधना कैसे करे,
एक में एक ही हो जाये?
यह द्वौ रूप जो बन गये,
यह एक में ही लय हो जायें।।२।।

(पूज्य माँ प्रश्न पहले भगवान को अर्पण करते और विस्तार रूप में प्रश्नकर्त्ता के तद्‌रूप स्वतः ही भाव प्रवाहित हो जाता!)

तत्व विस्तार - समझ मना यह जीव है क्या, यह व्यक्तिगत कैसे हुआ?
अहं दीवार यह बन जाये, प्रश्न में आपने आप कहा।।३।।

यह अहं है क्या इसे समझ ले, अहं मिटाव के काज करो।
पर अहं है क्या इसे जान तो लो, फिर मिलाप के यत्न करो।।४।।

यह दीवार है जो कालिमा है, अँधियारा बन जाये है।
इसके कारण ही मना, सत्त्व समझ नहीं आये है।।५।।

व्यक्तिगत जो रूप भये, जीव व्यक्ति बन जाये है।
पूर्ण में पूर्ण है वह, पर एक वह रह जाये है।।६।।

हर जीव जो माटी जाया, हर को पृथक बताये है।
एक सों अनेकों यह, व्यक्ति जान बनाये है।।७।।

अब समझ यह 'मैं' है क्या, अहंकार किसे कहते हैं।
बार-बार यह समझाया, यह संसार किसे कहते है।।८।।

यह 'मैं' तन मन बुद्धि, संग मिली करी पृथक भये।
विवेक की जा पे देख मना, संगी 'मैं' यह आन धरे।।९।।

सूक्ष्म बात है समझ ज़रा, विवेक की जा पे 'मैं' खड़ा।
जिसे पूर्ण में मिलाना था, व्यक्ति कर अरे वहाँ धरा।।१०।।

विवेक क्या तुझे समझाये, वह परम की राह सुझाता है।
पूर्ण वाकी रचना है, समझ विवेक यह पाता है।।११।।

विवेक राही यह भी जाने, माटी बुत यह तन ही है।
वाष्पमात्र ही यह मन है, बुद्धि भी मन संग ही है।।१२।।

मान्यता से यह बंध जाये, मेरे-तेरे में पड़ा रहे।
यह मेरा है यह पराया है, इसमें ही वह खड़ा रहे।।१३।।

हर बात जो भी करे, इक तन सम्बन्धी 'मैं' ही करे।
विवेक उठे तो देख यह ले, दीपक ज्ञान का यह ही भये।।१४।।

यह 'मैं' ही है जो दीवार बने, यह 'मैं' ही है जो ज्योत बने।
यह 'मैं' ही है जो विवेक बने, ब्रह्म की ओर भी जो बढ़े।।१५।।

जब लौ 'मैं' तनो संग करे, और 'मैं' ही बुद्धि भी भये।
व्यक्ति में यह लिप्त रहे, जीव यह तब तक ही रहे।।१६।।

यह 'मैं' जिस पल सत् जाने, सत् की ओर यह बढ़ जाये।
विवेक जो है वा संग करी, राम की ओर यह बढ़ जाये।।१७।।

यह ‘मैं’ ही कलिमा तब बने, जब स्थूल संगी यह भये।
तन मन बुद्धि तीनों यह, स्थूल ही है तू जान यह ले।।१८।।

जिस पल उस सत्त्व से, संग यह ‘मैं’ कर लेता है।
‘मैं तन नहीं’ इस ज्ञान के, तद्‌रूप यह हो लेता है।।१९।।

मेरी बुद्धि को क्या करूँ, प्रयोजन कोई नहीं मेरा।
समष्टि प्रयोजन जाना है, वो है केवल राम का।।२०।।

कई आये कई चल दिये, पर राम जग है बह रहा।
समष्टि में जो करना है, व्यक्ति वह ही कह रहा।।२१।।

जिस जान लिया वह चरण पड़ी, कहे मोरा योजन कोई नहीं।
सीस झुका के वो कहे, मोरा प्रयोजन कोई नहीं।।२२।।

उदासीन वो हो जाये, निज मन बुद्धि सों हो वो परे।
तन की बात वह क्या करे, तन बुलबुला है वह जान ले।।२३।।

उस ज्ञान के वह तद्‌रूप होये, जो समझा उसको मान वह ले।
मान्यता से तद्‌रूपता, शनैः शनैः वो त्यज ही दे।।२४।।

इक मान्यता ही तो है, जो कहो ‘तन यह मेरा है।’
इक मान्यता ही तो है, जो कहो ‘कुल यह मेरा है’।।२५।।

इक मान्यता ही तो है, जो कहो ‘बुद्धि यह मेरी है’।
यह संग भरी यह मोह भरी, मान्यता ही तो तेरी है।।२६।।

यह मान्यता सों संग हुआ, यह ‘मैं’ ने संग बनाया है।
या यूँ कहो यह ‘मैं’ ही है, जो संग बनी कर आया है।।२७।।

यह संग आच्छादित होये करी, परिस्थिति पे छाया है।
और आपुनो ज्ञान भी जान ले, परिस्थिति सों पाया है।।२८।।

यह संग त्यजी कर गर ‘मैं’ रे, सत् सों संग यह कर बैठे।
यह ‘मैं’ नहीं यह जान ले, और वह ही रंग यह धर बैठे।।२९।।

ज्यों ‘मैं हूँ’ यह कह करी, आप बना ही बैठा है।
जो कहे ‘मैं मन नहीं,’ वह मन से दूर ही रहता है।।३०।।

निरन्तर इसका अभ्यास हो, ‘मैं नहीं’ के संग तद्‌रूप भये।
वह ज्ञान जो शब्दन् राह मिला, उस ज्ञान की प्रतिमा आप भये।।३१।।

जो सत् स्वरूप रे, उपनिषदन् ने आप कहा।
जिस ‘मैं’ ने मिथ्यात्व त्यजी, उसके रे अनुरूप भया।।३२।।

पल में जानो वो मनवा, आप ही वह हो गया।
यह जान करी अरे जो जाना, उसे मान करी वहाँ संग हुआ।।३३।।

जितना जितना सत् के रे, तद्रूप यह होती जायेगी।
उतना अहं असत् त्यजी, सत्मय हो जायेगी।।३४।।

जितनी जितनी लग्न बढ़े, तीव्रता वहाँ आयेगी।
ज्ञान अग्न प्रज्वलित हो, अँधियारा वहाँ जल पायेगी।।३५।।

या यूँ कह लो दीपक जले, ज्योतिर्मय सब हो जाये।
ज्यों ज्यों ज्योति बढ़ती जाये, दिदायमान सब हो जाये।।३६।।

ज्योति हो तो जोत जले, ज्योतिर्मय सब हो जायेगा।
सो ज्योत जला अरे मनवा, उजियारा हो ही जायेगा।।३७।।

पुनि समझ यह बात समझ, 'मैं' की जहाँ तद्रूपता है।
जड़ के यह तद्रूप हुई, दीवार रूप इस धरा रे है।।३८।।

यह स्थूल से जाई के जब मिले, राहों में दीवार बने।
सत् के जब तद्रूप होये, राम का दीदार मिले।।३९।

जब लौ यह तद्रूपता, मिथ्यात्व की ओर हो जाती है।
जो आया निश्चित बिछुड़ गया, उसमें तब यह खो जाती है।।४०।।

खोये करी यह 'मैं' कहें, व्यक्तिगत कर देती है।
'यह मेरा मैं' 'मेरा आपुनो,' ऐसा भाव कर देती है।।४१।।

फिर उचित अनुचित न देखे, परिणाम तो कोई चाहती है।
पर किस विध हो यह कैसे हो, यह जान नहीं पाती है।।४२।।

इस 'मैं' को देख कर ओ मनवा, फिर सत्त्व के तद्रूप हो।
यह अहंकार जो राह में है, ज्योतिर्मय इसको करो।।४३।।

यह सत्त्व में खो जायेगा, यह ब्रह्म आप हो जायेगा।
जब लौ सत्य में न खोये, कुछ भी हो नहीं पायेगा।।४४।।

राम पुकारे राम मिले, पुकार में सत्यता चाहिये।
यह जान करी तुम क्या चाहो, राम राम बुलाइये।।४५।।

बिन बुलाये राम को, यह मिलन हो नहीं पायेगा।
पर राम प्रथम तू जान तो ले, क़दम तभी बढ़ जायेगा।।४६।।

यह जान करी कहो राम राम..............................। ❖

'मैं' के मिटे 'मैं' न रहे,
बाक़ी राम रह जायेंगे...

१६ मार्च १९८७ को होली के दिन का सत्संग निम्नलिखित भजन से आरम्भ हुआ। कई बार मन्दिर में भजन गायन के साथ-साथ परम पूज्य माँ का स्वतः स्फुरित प्रवाह भी प्रसाद रूप में मिला -

रंग दे मेरे स्वभाव को... (अर्पणा भजनावली - पृष्ठ नं. २८४)

रंग दे मेरे स्वभाव को, हे रंगीले साँवरिया।
जो चाहे अब जो भाये तोहे, वैसा रंग दे साँवरिया।।१।।
दर्शन दो मुझे रंगरेज़ा, अब मैं तो तेरा हो गया।
जो रंग चढ़ा था इस 'मैं' का, वह कच्चा ही अब हो गया।।२।।
अपने रंग में रंग दे मुझको, तू हे मेरे साँवरिया।
मैं तेरे दर पे आई हूँ, तू रंग दे मोहे साँवरिया।।३।।

पूज्य माँ - राम हे रे राम....

जन्म जन्म की रेखा का, स्वभाव भरा।
आत्म का संग कर्मन् का, संग भावन् का स्वभाव भरा।।

कर्मन् राही जो मिला, जो मिला सो मिल गया।
सबमें ही है रंग तेरा, वो रंग तेरा है दीख रहा।।

'मैं' की होली जला दो राम, बाक़ी तोरे रंग रह जायेंगे।
'मैं' के मिटे 'मैं' न रहे, बाक़ी राम रह जायेंगे।।

होली के रंग से तेरे ढंग, पूर्ण रंग ढंग तेरे हैं।
उस राही जो भी है, सब ही तो पिया मेरे हैं।।

इतना कहूँ कर जोड़ी कहूँ, प्रभु सीस झुका कर कहती हूँ।
आपके चरणन् में हे राम, निरन्तर ही रे बैठी हूँ।।

जो मेरा नहीं, जो मैं नहीं, वहाँ रंग न चढ़े।
जो तेरा है जो तू ही है, वह राम रंगी ही हो जाये।
राम रंगी ही हो जाये....

रंग दे मेरे स्वभाव को...

क्यों मुझे बताये रंगरेज़ा, को' रंग जो तुझ को भाते हैं।
स्वयं ही आकर रंग चढ़ा, जो तुझ को रंगने आते हैं।।४।।
मुझ को भी अब तू न बता, जस चाहे तू अब रंगता जा।
यह तो सब कुछ तेरा है प्रभु, तू जस चाहे रंगता जा।।५।।

पूज्य माँ - हे राम मेरे....

बार-बार जन्म लेई कर्म करी, फिर शास्त्र रची के मुझे कहे।
मैं कैसा रंग रंगूँ हे राम, तू मुझको यह आप कहे।।

मैं किस रंग में रंग जाऊँ, श्याम तू आप कहे।
ऐसे रंग बताये मुझे, जो मन रंग न सके।।

जब लौ मन यह मेरा है, यह रंग कभी न चढ़ पाये।
'मैं' रुचि का रंग यह ले, और रुचिकर ढंग ही रह जाये।।

मैं तुझे कहूँ राम मेरे, मुझको क्यों तुम कहते हो।
ऐसा रंग हो वैसा रंग हो, ऐसी बतियाँ कहते हो।।

तुम शास्त्रन् में भी कहते हो, तुम ज्ञान कही के कहते हो।
जो समझ परे की बात है, तुम राम मेरे वो कहते हो।।

मेरे बस में ज्ञान नहीं, मेरे बस में कोई कर्म नहीं।
मेरे बस में कोई ध्यान नहीं, मेरे बस में तेरा नाम नहीं।।

कृपा पुंज कहें तुझको, कृपा करी तुम ही रंग दो।
जैसा चाहो इस पल आई के, अब तो आई के वो रंग दो।।

होरी खेलें तुमसे खेलें, तुम ही तो मेरी होली हो।
पूर्ण जीवन तूने रँगाया, अज मैं खेलूँ ये मुझे कहो।।

मेरी होली तुम ही तो हो...

रेखा में भरो मन में भरो, नयनों में भरो या प्राणां हर लो।
राम मेरे तुम जो भी करो, मुझे राम के रंग से ही रंग दो।।

ऐसा रंग दो इस स्वभाव को, बाक़ी भाव ही रह जाये।
'मैं' का भाव अब नहीं रहे, बस तेरा भाव ही रह जाये।।

रंग दे मेरे स्वभाव को.....

विषय संग को त्यज करके, अब इन्द्रियाँ तुझ को हेरेंगी।
बिरह अग्न में जला करेंगी, जग सों मुखड़ा फेरेंगी।।६।।
इक ही चाहना रह जायेगी, तुम ही मुझ को आन मिलो।
करुणानिधे करुणा करके, अब तो आ कर दर्शन दो।।७।।

परम पूज्य माँ -

अब कौन विषय कोई विषय नहीं, सब जा राम मेरे तुम ही बसो।
जित देखूँ हर रूप में, राम मेरे अब तुम ही रहो।।

चित्रण जैसा तुम करो, जग चित्रित हो जाता है।
जैसे रंग तू चाहे रंगरेज़ा, वैसा रंग वहाँ चढ़ जाता है।।

वैसा भाव भरी आये सामने, वही रूप धरी कोई आता है।
कोई तो रंग उस ढंग का है, तेरे कहे चढ़ जाता है।।

वो होली मानूँ, तेरा रंग वो मानूँ।
तेरा ढंग वो मानूँ, तेरी रेखा मानूँ।।

उसे जैसे जानूँ जो भी जानूँ, जानूँ राम मेरे राम हैं।
जो भी मानूँ जैसा मानूँ, मानूँ राम मेरे राम हैं।।

रंग दे मेरे स्वभाव को...

कब स्वीकार करोगे मुझ को, कब तुमको ध्या पाऊँगी।
मिथ्या 'मैं' मेरी कब मिटेगी, तुझमें समा कब पाऊँगी।।८।।

रंग दे मेरे स्वभाव को...

पूज्य छोटे माँ - आज होली का त्योहार है - ख़ुशियों का त्योहार! और यह जो रंग है, तन का रंग, इतना पक्का कि और कोई रंग चढ़ ही नहीं पाता। तो आगे कैसे बढ़ें?

परम पूज्य माँ - होलिका, किसी को अपनी गोद में बिठाये हुए थी, जब वो जलाई गई। वो कौन थी? प्रह्लाद किस चीज़ के लिए मशहूर हैं - भक्ति भाव के लिए! और भक्ति के साथ, सत् के साथ, वो निर्भय थे और निर्भयता प्रदान करते थे।

होली जले यह बार बार, वहाँ सत् न जल सके।
सब बले अभिमान जले, वहाँ राम न बल सके।।

जितने रंग इस मन के हैं, वो भस्म हो जायेंगे।
निर्मल एको राम हैं, वो भस्म न हो सके।।

इस बात को जानो। दूसरी तरफ़ से, दूसरी बात को जानो कि संसार विभिन्न रंगों से भरा हुआ है - काले से सफेद तक! परन्तु विभिन्न रंगों के मिश्रण होने से यह सप्तरंगी उज्ज्वल नहीं है। वहाँ पर भी बहुत मिश्रण है। इस मिश्रण को क्यों देखें? अगर देखना है तो भगवान को देखो! उस चित्रकार को क्यों नहीं देखते, जिसने चित्र बनाया है!

लोगों पर हम इलज़ाम लगाते हैं। बुरा भला कहते हैं। इसलिए हमारे रंग ख़राब हो जाते हैं। इनमें अगर एक भगवान का रंग रह जाये तो सब रंग भगवान के बनाये हुए दीखते हैं।

सब रंग बलें हमारे ही, गर ज्ञान अग्न पे जा बैठें।

बाक़ी राम ही रह जायें, गर सत्य लेई के आ बैठें।

बातों में बातों से क्या, भक्ति श्रद्धा चाहिये।

तन से उठकर मन से उठकर, चरण लिपटाव ही चाहिए।

फिर ही यह अग्न बाले है!

बाले यह मन, पूर्ण रंग यह भस्म करे...

बाक़ी राम ही रह जायें, 'मैं' और मेरा ख़त्म करे।

इस भाव से होली मनाओ!

तब हमारे गिले-शिकवे कम होने लगेंगे। हमारे reactions (प्रतिक्रियाएँ) कम होने

लगेंगी। पर याद रहे, यह होली रोज़ खेली जाती है। एक दिन तो प्रतीक होता है और बाक़ी जीवन, यही रंग मिले हुए हैं।

कोई आकर हम पर रंग फेंक देता है और कई रंग हम किसी पर फेंक रहे हैं। ये रंग तो दीख जाते हैं इसलिये हम भिड़ जाते हैं। reactions के रंग तो दीखते ही नहीं। प्रहार करके, हम पर चढ़ के, हमें बदल जाते हैं जिनका हमें पता ही नहीं लगता। हम उन रंगों को disinfect (रोगाणु रहित) नहीं कर सकते। उन रंगों को हम देख भी नहीं सकते।

इसलिये होली का त्योहार एक दिन नहीं, रोज़ मनाया जाता है। यह जानते हुए कि गुण गुणों में वरतते हैं और रंग, रंग बदलते हैं। हर गुण का रंग होता है, वो रंग आपके गुण बदल देता है। इसलिये कहते हैं सिर्फ़ अन्न को ही disinfect मत करो।

जो खाते हो, वो अन्न भी देख लो। जो emotions का अन्न है और जो हमारे आन्तर से ज़बान बनके, हमारी आवाज़ बन के निकलता है, उस अन्न को भी देखो! क्योंकि वो अन्न हम कानों के ज़रिये खा रहे हैं। कर्मों को देखो और उनको disinfect कर लो, क्योंकि वो भी हम खाते हैं। हम ज़बान राही खाते हैं, कानों के राही खाते हैं, त्वक् के राही खाते हैं, हाथों के राही खाते हैं। हरेक सम्पर्क के राही, कुछ न कुछ हम अन्दर ले जाते हैं। क्यों न, पहले ही मान लें -

यह रचना है राम की, रेखा राही मुझे मिली।
बुरा मिला भला मिला, दिया राम ने मन देख सही।।

जो उसमें राम का नाम भरोगे वो disinfect हो जायेगी! The cheapest disinfectant. जो कभी ख़त्म ही नहीं होता। न मोल लगे न तोल लगे, न रखने के लिए कोई जगह चाहिए। न कोई समय चाहिये लाने के लिए, जिसके लिये कुछ भी नहीं चाहिये, वो disinfectant. अपने पास रख लो! फिर गिले-शिकवे के रंग नहीं चढ़ते! ❖

सी डी. नं. ३२, १६/३/१९८७

Form IV (See Rule 8)

1. Place of Publication: Arpana Trust, Madhuban, Karnal 132037, Haryana.
2. Periodicity of Publication: Quarterly
3. Printer's name: Mr. Ajay Mittal Nationality: Indian
   Address: Sona Printers Pvt. Ltd., F-86/1 Okhla Industrial Area, Phase I, New Delhi 110020
4. Publisher's name: Mr. Harishwar Dayal Nationality: Indian
   Address: Arpana Trust, Madhuban, Karnal 132037, Haryana.
5. Editor's name: Ms. Poonam Malik Nationality: Indian
   Address: Arpana Trust, Madhuban, Karnal 132037, Haryana.
6. Names and addresses of individuals who own the newspaper and partners or shareholders holding more than one percent of the total capital: Arpana Trust.

I, Harishwar Dayal, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Harishwar Dayal

Arpana Trust, Madhuban, Karnal, Haryana

- परम पूज्य माँ

अर्पणा
समाचार पत्र

अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन,
करनाल, हरियाणा
९ मार्च २०१४

अर्पणा में आनन्द के पल

वैदिक विवाह

प्यार, सद्‌भाव और ख़ुशी के भावों से ओत-प्रोत, अर्पणा आश्रम के मन्दिर में, दीपांजलि का विवाह विश्वजीत के साथ, १४ फरवरी, २०१४ को सम्पन्न हुआ।

समारोह, परम पूज्य माँ द्वारा किए गये 'गृहस्थाश्रम प्रवेश' के अर्थ एवं वैदिक श्लोकों की व्याख्या से परिपूर्ण था। जिसमें नवदम्पत्ति अपने नये परिवार के प्रत्येक सदस्य की प्रेम, विनम्रता एवं उदारता से सेवा करने के लिए प्रतिबद्ध होने की शपथ लेते हैं।

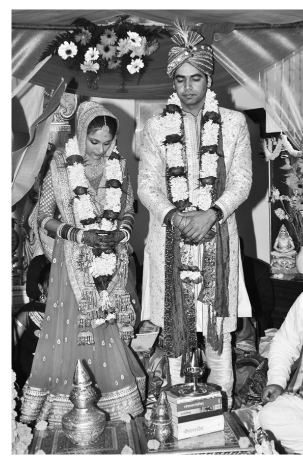

परम पूज्य माँ द्वारा की गई शास्त्रों की दिव्य व्याख्या के प्रतीक रूप में प्रज्वलित ज्योत रखी गई।

सांप्रदायिक सद्‌भाव...

अर्पणा परिवार के ३९ वर्ष से एक अभिन्न अंग, श्री राज पाल को, ज़िला प्रशासन ने २६ जनवरी, २०१४ को, कुटेल गाँव में तनाव दूर करके सांप्रदायिक सद्‌भाव बनाये रखने के लिए सम्मानित किया। जिससे अर्पणा का प्रत्येक सदस्य अति हर्षित है।

हरियाणा खाद्य निगम के मंत्री ने श्री राज पाल को प्रशंसा का प्रमाण पत्र प्रदान करके पुरस्कृत किया।

उदारता पूर्वक उपहार - नेत्रदान

अर्पणा अस्पताल के शल्य चिकित्सा विशेषज्ञ, डॉ. विवेक आहुजा, एवं उनके परिवार ने अपनी माता जी के निधन के उपरांत नेत्रदान की अनमोल देन दी। उस रात को ही उनकी आँखें कृष्णी और राजीव के लिए प्रत्यारोपित की गईं जो अब देख पाने में समर्थ हैं। इस उदार, हृदयस्पर्शी, पुण्य कृत्य के लिए हम उनके अत्यन्त आभारी हैं।

आभार युक्त कृष्णी

कृपया हमारे फेसबुक पेज पर अर्पणा की गतिविधियों की जानकारी लें।

हरियाणा

मनोरंजक विधि से ग्रामीण प्रशासन की सीख

हरियाणा के ग्रामीण समुदायों में प्रशासनिक सूझ-बूझ काफ़ी कम है, एवं महिलाओं की भागीदारी तो लगभग 'न' के बराबर है। अर्पणा के ग्रामीण कार्यकर्ताओं ने, ८ गाँवों में, मनोरंजक नाटकों द्वारा ग्रामीण बैठकों के महत्त्व और गाँव के लोगों (महिलाओं एवं पुरुषों) दोनों की सक्रियता की आवश्यकता पर बल दिया। दर्शकों ने काफ़ी बड़ी मात्रा में, जागरूकता के साथ विषय को समझते हुए, इनमें भाग लिया।

हिमालय पर्यावास

कड़ाके की ठंड से बचाव के लिए

अर्पणा द्वारा ५ दूरदराज़ के गाँवों (हुरेद, दादर, दालपा, छपरोठा और फौरा) में से २१ बहुत ही ग़रीब परिवारों को कम्बल और तिरपाल वितरित किये गये।

कुछ चुने हुए किसानों के लिए ज्ञानवर्धक दौरा

खेती, बागवानी एवं डेयरी की नई तकनीकों को सीखने के लिए २६-२९ दिसम्बर, २०१३ को, नाबार्ड के सहयोग से जटकारी के दूरदराज़ के गाँवों से २० किसानों (१२ किसान पहली बार) ने हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर का दौरा किया।

गजनोई गाँव में वित्तीय साक्षरता प्रशिक्षण

१८ दिसम्बर को अर्पणा के गजनोई केन्द्र में, हिमाचल किसान बैंक द्वारा, एक वित्तीय साक्षरता प्रशिक्षण का आयोजन किया गया। मंगला के हिमाचल किसान बैंक के प्रबन्धक एवं लीड बैंक, चम्बा के प्रबन्धक साथ ही नाबार्ड के डी.डी.एम. ने बचत, बैंक खातों, और नियमित रूप से जमा करने पर चर्चा की। स्वयं सहायता समूह के सदस्यों एवं किसानों और भाग लेने वाले छात्रों की बैंक सम्बन्धी समस्याओं का हल किया गया।

अर्पणा, टाइडज़ फाऊँडेशन, यू एस ए और गिव टू एशिया, यू एस ए, का हिमाचल के कार्यक्रमों में सहयोग के लिए हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता है।

विशेष रूप से वर्णन

बस्सी अकबरपुर गाँव में मेला

२९ दिसम्बर को, महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों ने, अर्पणा की टीम के सहयोग से, बस्सी अकबरपुर गाँव में मेले का सुव्यवस्थित ढंग से आयोजन किया, जहाँ उनके अपने समुदायों के साथ विकासात्मक गतिविधियों और स्वास्थय के सिद्धांतों पर चर्चा की गई।

३५० महिलाओं व बच्चों ने खेलों, जलपान स्टॉलों और लॉटरी के साथ साथ गानों और ग्रामीण बैठकों के महत्त्व को नाटक द्वारा रूपांतरण में भाग लिया।

अर्पणा द्वारा आयोजित, विकलांग व्यक्तियों के संगठनों से कई व्यक्तियों ने मेले में स्टॉल लगाये और उसके आयोजन में सक्रिय रूप से मदद की।

इण्डियन् ड्वैल्पमैंट और रिलीफ़ फण्ड, यू एस ए, क्रिस्टोफल ब्लाइंडेनमिशन, जर्मनी, गिव टू एशिया एवं टाइडज़ फाऊँडेशन का हरियाणा के गाँवों में महिला सशक्तिकरण कार्यक्रमों के समर्थन के लिए हार्दिक आभार।

अर्पणा अस्पताल

`एंडोस्कोपी शिविर

८ दिसम्बर, २०१३ को अर्पणा अस्पताल ने एंडोस्कोपी शिविर का आयोजन किया जहाँ निःशुल्क परामर्श के साथ केवल आधे दामों पर परीक्षण किये गये। अर्पणा के ट्रस्टी, डॉ. राहुल गुप्ता (DNB, MNAMS, FIMSC), दिल्ली के सम्माननीय चिकित्सक, ने स्वेच्छा से अपनी सेवायें देते हुए २६ रोगियों का इलाज़ किया।

रक्त समूह एवं चिकित्सा जाँच शिविर

अर्पणा अस्पताल ने, १५० कर्मचारियों के लिए २३/११/२०१३ को 'रक्त समूह एवं जाँच शिविर' और २७/११/२०१३ को 'चिकित्सा जाँच शिविर' का कुटेल की एक चावल मिल, डी डी इंटरनैशनल में आयोजन किया।

२३/०१/२०१४ को कार्डियोलोजी

अर्पणा अस्पताल ने, दिल्ली हार्ट एवं लंग इंस्टीट्यूट के डॉ. अनिल ढल (MD, DM, FACC, FESC, FSCAI, FCSI), के सहयोग से सभी रोगियों को सस्ती हृदय के स्वास्थ्य की देखभाल की सुविधा प्रदान करने के लिए कार्डियोलोजी शिविर का आयोजन किया। विशेषज्ञ परामर्श मुफ़्त किया गया, जबकि परीक्षण जैसे कि, इकोकार्डियोग्राम, टीएमटी ईसीजी व रक्त परीक्षण के लिए, ७०% सबसिडी दी गई। १७ मरीज़ आये और १३ प्रक्रियाएँ की गईं।

अर्पणा अस्पताल में पंजीकृत मैडिकल प्रैक्टिशनर (RMPs) के लिए सतत चिकित्सा शिक्षा

अर्पणा अस्पताल पंजीकृत मैडिकल प्रैक्टिशनर (RMPs) के लिए सतत चिकित्सा शिक्षा सत्र आयोजित करता है, जो गाँवों में चिकित्सा प्रदान करते हैं, परन्तु जिन्हें वास्तव में कोई चिकित्सा प्रशिक्षण नहीं होता। २२/१२/२०१३ को, डॉ. लुकेश चराया (MBBS, MS. ortho), द्वारा ऑस्टियोपोरोसिस्ट के विषय में एक प्रस्तुति पेश की। और उनके रोगियों के लिए उपलब्ध अर्पणा अस्पताल में ऑर्थो सर्ज़री के विषय में बताया।

अर्पणा अस्पताल में आँखों के कार्यक्रम के समर्थन के लिए
क्रिस्टोफल ब्लाइंडेनमिशन, जर्मनी का विशेष आभार।

दिल्ली के कार्यक्रम

अर्पणा सैन्टर, नई दिल्ली में ईएनटी और नेत्र शिविर का आयोजन

कल्पना और जयदेव देसाई, यूएसए, के मित्रों के एवं स्वर्गीय ओरिन नाईक के परिवार के सहयोग से मोलरबन्द, दिल्ली की पुर्नवास बस्ती में अर्पणा द्वारा ईएनटी और नेत्र शिविरों का आयोजन किया गया।

डॉ. मीना अग्रवाल

ईएनटी शिविर - १ दिसम्बर को, ईएनटी विशेषज्ञों डॉ. बी एम अबरोल, डॉ. श्रीमती अबरोल और डॉ. मीना अग्रवाल, द्वारा १८० छात्रों की ईएनटी जाँच की गई। ७० छात्रों को उसके आगे अवश्यक इलाज़ की आवश्यकता थी। कई छात्रों को आगे के इलाज़ के लिए AIIMS भेजा गया।

नेत्र शिविर - २४ दिसम्बर को नेत्र शिविर के लिए प्रश्नावली द्वारा ७५८ अर्पणा के बच्चों की जाँच की गई। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्र के नेत्ररोग विशेषज्ञ द्वारा ११९ छात्रों को नेत्र दोष के लिए अत्यधिक रियायती दरों पर AIIMS से चश्में प्रदान किये गये।

एस्सेल फाऊँडेशन (इंडिया और केयरिंग हैण्डज़ फॉर चिल्ड्रन यूएसए, का मोलरबन्द नई दिल्ली के बच्चों की शिक्षा के लिए हार्दिक आभार।

Your assistance is needed to continue these programmes:

Both Arpana Trust and Arpana Research & Charities Trust are approved under Section 80G of the Income Tax Act, 1961, giving 50% tax relief for donors in India.

FCRA Registration No. for Arpana Trust is 172310001

FCRA Registration No. for Arpana Research & Charities Trust is 172310002

Send your contribution for dissemination of humane values & medical and community welfare services in Delhi to: **Arpana Trust, Madhuban, Karnal, Haryana 132 037**

Send your contributions for health & development services in Haryana & Himachal to:
Arpana Research & Charities Trust, Madhuban, Karnal, Haryana 132 037

Tel: 91-184-2380801, Fax: 91-184-2380810, at@arpana.org and arct@arpana.org

Please let us know by email or telephone, whenever you transfer funds to Arpana.

Mr. Harishwar Dayal, Executive Director of Arpana. Mobile: +91-9818600644

Mrs. Aruna Dayal, Director Development Mobile +91-9896242779, +91-9873015108